रत्नपाणिकृता

उषाहरण-नाटिका

अथ मङ्गलश्लोकाः ।—

तत्र प्रथमं विनायकस्य :—

विघ्नं विनिघ्नन्निव जामदग्न्यं प्रचण्डशुण्डाभिधपाशतो यः ।
प्रगृह्य चिक्षेप गृहे स शौरेः पायादपायादनपायमूर्त्तिः ॥१॥

अथ विष्णोः :—

यो वैनतेयमधिरुह्य सुताग्रजाभ्याङ्कृत्वा सहस्रभुजखण्डनमुच्चकार ।
नागावरुद्धमनिरुद्धमरुद्धगद्धा सोऽव्याद्धरि र्धरधरोऽपवलोऽष्टबाहुः ॥२॥

अथ शिवस्य :—

स्वयं भिक्षाचारी वितरणविधौ सर्वनिधिदो
विषादो निर्मृत्यू रविवरशताभोऽपि विशंचिः ।
चिरत्नश्यामक्रोशो विधुवलितभालोऽप्यतिलक—
श्चरित्रं चित्रं स प्रभवतु मुदे यस्य भवताम् ॥३॥

अथ भानोः :—

वृष्ट्या सृष्टिकरस्सहस्रकिरणश्चक्षुर्जगत्यामसौ
साक्षी रोगहरोऽपरः सुरवरो यस्यारुणः सारथिः ।
सप्ताम्भोधिविलङ्घने पटुतरः कल्पान्तकारी विभु-
र्नित्यं सप्तसुसप्तियुक्तरथयुग्भव्याय भूयाद्दिनः ॥४॥

अथ दुर्गायाः ।—

आविर्भूताऽत्र माया व्रजमहितवधूसंविधाने निकामं
कंसध्वंसैकहेतू रिपुकलितपदाकोटरी या बभव ।

याऽऽज्ञौ मध्वादिदैत्यप्रलयपरिकरौ यादवौघप्रपूज्या
सा भाव्या नव्यभव्या भवविभवकरी शङ्करी शङ्करोतु ॥५॥

अथ श्रीमिथिलेशस्य :—

दयालयो दानिषु वर्णजेता यो रुद्रसिंहोऽभवदुग्रचेताः ।
धर्म्मावतारो धृतनीतिभारो वेदान्तसिद्धान्तगृहीतसारः ॥६॥
तत्पुत्रो नृपतिलकः श्रीमान्महेश्वरसिंह उदितकलः ।
विलसति यस्य चरित्रं स्वल्पे वयसि यथा हरितः ॥७॥
विनिधाय तदीयाज्ञामुषाहरणनाटिकाम् ।
कुर्वे सर्वमुदेऽगर्व्वो रत्नपाणिरहं कृती ॥८॥

अथोषाहरणहेतुभूतं पद्यमाह :—

पूर्वं वृत्तमभूदितो हि सुमते तच्छ्रूयतामद्भुतं
भक्त्याराधितशङ्करो बलितरो बाणासुरो भाग्यतः ।
कस्मिंश्चिद्दिवसे सहस्रभुजभृच्छम्भोः सकाशाद्वरं
नाथ प्रार्थितवानितीह बलभृद्योद्धा जनो दीयताम् ॥९॥

तदुत्तरं शिववाक्यं पद्येन :—

मत्तोऽभ्यदर्थमित्यवेत्य गिरिशः प्रोचे वचस्तत्क्षणात्
केतुस्ते हि यदा पतिष्यति तदा बाणासुरास्त्वत्पुरः ।
कण्डूतिच्छिन्नबाहुजा सहतरा तस्या निवृत्तिद्रुतं
धैर्यं धेहि विधेहि तत्पुरगमं भाव्या न भाव्या गतिः ॥१०॥

अथ नत्योद्योगः । नान्द्यन्ते सूत्रधारः—'अलमतिविस्तरेण आर्य्ये ! इहागम्य-
ताम्' । प्रविश्य नटी सूत्रधारं प्रति वदति— आणवेदु [आज्ञापयतु] ।
सूत्रधारः— 'आदिष्टोऽस्मि, तद् गीयताम्' । तत्र आह नटी—नटरागे,
शिवोद्देश्यकं मङ्गलगीतं यथा :—

कर डामरु डिमि डिमिक बजाबथि, गाबथि घुमि घुमि गौरिपती ।
भाल बालविधु सम्रत शोभित, तीनि नयन लस तीनि गती ॥

गीत सं०—१

भाल = कपार पर बालचन्द्र सदिखन । यती = यति, संन्यासी । लस =

जय शम्भु यती, जय शम्भु यती ॥
अपरुब नाच रचथि जगती ॥ध्रु०॥
गङ्ग जटा बह संग रंग कर चौदिस भू—परेत—पती ।
कटि लस नाग भूति तनु लेपित बसन अजिन उर मुण्डतती ॥
तहिखन सुन्दर पुरुषपुरन्दर, कहुखन उमता शुभद मती ।
सुरमुनि आदि पार नहि पाबथि, के नहि जगभरि करए नती ॥
रत्नपाणि मन आनि बसाओल, शम्भुसहित लस पारबती
चारि पदारथ वितरण पारथ, जँ हर हेरथि एक रती ॥१॥

अथार्य्यायाः —

जय जय कंसविनाशिनी । जय यादवकुलवासिनी ॥
नत - जन—मङ्गलकारिणी । करुणाकरि अरि-दारिणी ॥
अतसीकुसुम - विकासिनी । कामदहन - परिहासिनी ॥
मदनतनय - परिपालिनी । समर सदा जयशालिनी ॥
तुअ माया अनपायिनी । तीनि भुवन गति दायिनी ॥
रत्नपाणि हृदि भासिनी । कर मङ्गल रिपु शासिनी ॥२॥

शोभए । बसन = मृगचर्मक वस्त्र । उर = छाती पर मुण्डक पाँती । पुरुषपुरन्दर = श्रेष्ठपुरुष । उमत = उन्मत्त । नती = प्रणाम ।

गीत सं०—२

नतजन = प्रणत लोक । अतसी = तीसीक फूल । कामदहन = महादेव । मदनतनय = अनिरुद्ध ।

अरिदारिणी = शत्रुनाशिनी । अतसी = तीसीक फूलक सदृश । कामदहन = महादेवक परिहास कयनिहारि । मदनतनय = अनिरुद्ध । अनपायिनी = अविनाशिनी ॥

अथात्र नाटिकायां कस्य कस्य प्रवेश इत्याह पद्येन :—

शम्भोराद्यं ससूनोः प्रमथगणवतः शैलजायाः प्रवेशः,
पश्चाद्बाणात्मजाया अतनुतनुभुवश्चित्रलेखाऽभिधायाः ।
सूनोरम्भोजयोनेरमितबलजुषः साङ्गबाणासुरस्य
तादर्थ्यस्याथोऽथकानां हलबलितमनोजातदर्प्याथरीणाम् ॥११॥

अथ शिवप्रवेशगीतम् :—

विधिवश एक दिन शिव मन भेल । क्रीड़ा करिअ सगण वन गेल ।
प्रथम आदि अनुचर सब सङ्ग । गिरिजा सङ्ग कएल हर रङ्ग ।
कि कहब तखनुक रासक रीति । देव चरित थिक तेहि परतीति ।
सुर मुनि नर पशु सब एक जाति । दम्पति भए रति कर एक भाँति ।
कि कहब तखनुक शिवक विलास । छुटि गेल वन भए गेल कैलास ।
ताहि समय ऊषा मन लाए । पहुँचलि सङ्ग सखी मिलि धाए ।
बाणसुता अनुपम रुचि देह । त्रिभुवन सुन्दरि कनकक रेह ।
देखि देखि सबहिक अनुपम केलि । यौवनवश आकुलि भए गेलि ।
काम कलपतरु मन गहि सुरत । कोन दिन हमर मनोरथ पुरत ।
से बुझि गिरिजा शम्भुक नारि । कहल उषाहि सदस विचारि ।
माधव धवल दोआदशि पाए । सपन अपन पति मिलतहु जाए ।
से सुनि उषा हरषमय भेलि । सखीसहित शोणितपुर गेलि ।
गिरिजा गिरिश कएल कत रास । पहुँचल जाए तखन कैलास ।
रत्नपाणि भन पहिल प्रबन्ध । आगु कहब गए कति विध बन्ध ॥३॥

अतः परं किं जातं, तत्र दोहा :—

बितल बहुत दिन अवधि तह, उपगत माधव मास ।
आज दोआदशि निशि सपन, गिरिजा पुरब आस ॥१॥

गीत सं०—३

रुचि=कान्ति । कनकक रेह=सोनक रेखा । सदस=एकान्तमे । माधव धवल=वैशाख शुक्ल ।

तखन [1]सोअबिच यामिनी, ऊषा सुतलिह जाए ।
कोटि कामद्युति अतिरसिक, केओ जन पहुँचल धाए ॥२॥
रङ्ग रभस सभ भय बितल, ऊषा उठलि चेहाए ।
निया सत्य नहि केओ पुरुष, देखल सङ्ग सहाय ॥३॥
मोहि दूषित कए गेल जन, कि कहब काहि बनाए ।
कोन गति भेटत से रसिक, तादृश रचिअ उपाय ॥४॥
विरह बेआकुलि क्षणिक रति, जागर बिछुरल नाह ।
परम गुपुत नहि बेकत कए, ऊषा पड़लि अथाह ॥५॥
सुमरि सुमरि पहु सकलगुण, कोकिल—कल—संलाप ।
दए निधि विधि हरिलैल पुनु, अन्तर करथि बिलाप ॥६॥
जत जत अछि परिचारिका, ताहि केओ न गेआनि ।
कहब काहिसँ सपन गति, के फेरि मिलति [2]सेआनि ॥७॥
अधिक [3]पुराकृत पुण्यतहु, गौरि कएल वरदान ।
अचल विचल नहि जानि मन, तसु अब करिअ बयान ॥८॥

अथासः परमुषा निर्दोषा दोषाकरमुखी विदुषी विदितरहस्यां वयस्याञ्चित्रलेखामाहूय स्वाप्निकोदन्तसन्तानं हन्ताऽभिषं बभाषे । पटुतरा नटी प्रकटयति तद्वृत्तं सुरगिरा गीतेन गुञ्जरीरागे :—

जीवनं मम रक्ष रक्ष न चान्यथा विलपामि ।
कस्समेत्य विधाय सङ्गमितो गतो हि वदामि ॥
शिव शिव !! हता विधितया नता साऽशरणेव ॥ध्रुवम्॥
दग्धमेव शरीरमित्थमवेहि तद्विरहेण ॥
आलि ! किं मम तं विना सुषमा-समृद्धि-भरेण ॥

1—कोठा । यामिनी=राति । द्युति=कान्ति ।
2—सेआनि=सज्ञानी ।
3—पुराकृत=पूर्वक कएल । बयान (विदेशीशब्द)=व्याख्यान, सविस्तर कथन ।

एवं विधेरपि सृष्टिकुशलविरहिता तल्लिखामि करेण ।
पट्टके विबुधाधिविग्रहमादरेण वरेण ॥
वर्त्तते मनसीह मे रसिको यदा नयनेन ।
तं विलोक्य वदामि हे सखि ! नान्यथा नयनेन ॥
दूषिताऽहमनेन चेदिह नेतरं कलयामि ।
धर्मतो मम रक्षणञ्च यथातथा हि लपामि ॥
किङ्करीवत् ते भजामि चरामि शक्तिभरेण ।
तावदेव ममाखिलं सखि जीवनं रमणेन ॥
एवं सखीजनतावराऽसि नता च सर्वजनेन ।
जीवनं मम ते करे सखि किं तदा कथनेन ॥
रत्नपाणिमवेहि तं रसिकं गुणप्रकरेण ।
षोडशाब्दवयोगतं खलु मोहनं परमेण ॥४॥

—अष्टादशमिदम् ।

अथोषाऽऽकाशवाक्यं निशम्य चित्रलेखा विशेषादरादाह पद्याभ्याम् :—

तिष्ठन्तु यान्तु वा प्राणास्तव कार्यानुरोधतः ।
आज्ञावशाऽस्म्यन्येषां विद्धि मां किङ्करीमिव ॥१२॥
लिख्यन्ते प्राणिनस्सर्वे मया पट्टे ऽनुरूपतः ।
दृश्यतां सर्वचिह्नेन तेषु को रतितस्करः ॥१३॥

अथ सर्वेषामयमाशयः । स च भाषागीतेन लिख्यते :—

माधवशुक्ल तीथि द्वादशि थिक, ऊषा से मन लाए ।
गौरी वर-निधि बूझि सौधबिच, एकसरि सुतलिह जाए ॥
कोटि-काम-दुति युवा रसिक जन, ऊषा सेजपर आए ।
रङ्गरभस कत भेल सपन बिच, ऊषा उठलि चेहाए ॥
जागर नागर क्यो नहि देखल, तखन कएल मन खेद ।
काहि कहब तत सपन-चरित अत, क्रिया सत्य नहि भेद ॥

गीत सं॰ ५—माधव=वैशाख । सौध=कोठा । दुति=चमक । जागर=

असमय समय रमित भए नागर, मोहि दूषित कए गेल ।
काहि कहब हम विरह बेआकुलि, विधि सुख दए हरि लेल ॥
गुपुत कथा हम कहब काहिसँ, कहइत होअ अतिलाज ।
गौरि देल वर गुपुत न राखिअ, बेकत करिअ हम आज ॥
कहल सान-गति चित्रलेखासँ, जानि सखी निज प्राण ।
विपति अथाह पड़ल छथि मानस, तुअ बिनु के कर त्राण ॥
सुनि सभ चित्रलेखा एह भाखल कहिअ सखी मन चाह ।
हमर शक्यबिच आन तरह नहि, केहन देखल धनि नाह ॥
तखन विचारि कहल बाणासुर—तनया जत जत भेल ।
आन तरह नहि बुझब रसिकजन दए विधि निधि हरि लेल ॥
विधितहु चरित अधिक तुअ हेसखि, के नहि जग भार जान ।
तीनि भुवन जन लिखब सहज तुअ, कर वर पट्ट समान ॥
की हम कहब रहब सुदिनि भए, करब सकल तुअ काज ।
सुरगुरु हमर तोहर कर हेसखि, तकर मोहि नहि लाज ॥
विरह-दवाकुल मोर जिव चातक रहए न पल एक धीर ।
तुअ वश हमर रसिक अवलोकन, से मोहि स्वातिक नीर ॥
तन्हि बिनु विफल हमर सुखमा तनु, धन जन राज समाज ।
राखु राखु मोर जीवन हेसखि, पहु दरशन दए आज ॥
उषा विकलमन देखि दयामय, चित्रलेखा भए गेलि ।
कहल उपाय दोअ प्राण जनु, होएत फेरि तोहि केलि ॥
आनक अयश एक तुअ वश हम, सुदिनि जानब मोहि ।
लिखब पट्ट हम ताहि देखब पहु, कि कहब सहचरि तोहि ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि हे धनि, गौरि कएल वरदान ।
पुरत मनोरथ निश्चय जानब, एहि तरह नहि आन ॥

जगला पर । नागर=चतुर प्रेमी । शक्य=शक, करबा योग्य । तरह=प्रकार । सुदिनि=सेविका, भनसिया । सुरगुरु=बृहस्पति । विरहदवाकुल=विरहरूपी दावानल सँ व्याकुल हमर प्राणरूपी चकवा पक्षी, ई पक्षी स्वाती नक्षत्रक मेघक बूँदसँ तृप्त होइछ, से जल हमरा लेल प्रियदर्शने थिक । सुषमा=परम शोभायत ।

अथ चित्रलेखा पट्टं लिलेख । भाषया दण्डकच्छन्द :—

लिखल तहिखन चित्रलेखा जगत सबहिक अंश ।
सभ नकारल तखन देखल आएल जनमल कंश ।।
देखि यदुवरअंश हरषित भएल कृष्ण अनूप ।
तन्हिक बालक कुलक पालक मदनतनु अनुरूप ।।
मदन-बालक जखन देखल कहल मन गुनि, "आलि !
पुरुष-पारथ देखि कृतारथ भेलहुँ सभ गुनशालि ।।
हमर मानस हिनक बश भेल तेहन होअ उपाय ।
पहुसमागम देखि जागर-समय मीलिअ धाय ।।
हमर मन अछि एहन व्याकुल कहब की सखि तोहि ।
आज नहि यदुराज आओत तखन की जग मोहि ।।
तोहर चित्र चरित्र विधि तहँ के न जग भरि जान ।
हमर प्राणक त्राण तुअ कर कहब की सखि आन ।।
रत्नपाणि समान यदुवर मिलब निशि मोहि आज ।
तखन जानब हमर जीवन सफल सभ मनकाज ।।९।।

अथातः परमुषाविलापमाकर्ण्य चित्रलेखा वदतिस्म—

"हे सखि प्राणवल्लभे ! भवदुक्तमिदमसाध्यं प्रतिभाति । यतः सिन्धुतीरे विनाशा वायोरप्यगम्यायां द्वारकानगर्यां प्रचण्डमार्त्तण्डाखण्डप्रतापो जिताखण्डलो महीमण्डले सपरिवारः श्रीकृष्णो वसति । तत्र चूर्णेऽष्टमखण्डेऽतिमण्डिते धाम्नि बहुवयस्यैः रहस्यादिकं कुर्वन्ननिरुद्धस्तत्रप्सा नृत्यादिकमवलोकयन् गोलोक इव विहरति । तत्राबलाबलाबलाहं, हे सखि !, कथं गच्छामि ।"

इतिश्रुत्वा हताशा बाणपुत्री जगाद :—

"हे सखि ! त्वमप्येवं वदसि ? त्वदन्या का मम सहायभूता ? न कापि ! तर्हि तव पुरस्तादेवाहं प्राणांस्त्यक्ष्यामि ।"

गीतसं०—९

नकारल—'नहि' कहल । मदनतनु—कामदेवक देह सन । त्राण—रक्षा ।।

इत्युषावचो निशम्य सदया चित्रलेखाऽऽह :—

"हे सखि ! मा जहीहि प्राणान् । तवार्थेऽहं व्रजामि । परन्तु मद्वचनं शृणु ।"

अत्र दोहा :—

तोहर मनोरथ बूझि सखि, गौरि कएल बरदान ।
[१]अनल शीत चल अचल भव, एहि तरह नहि आन ।।९।।
न करु मलिन मन हे सखी, सुमरि गौरिपदकञ्ज ।
त्वरित समीहित सिद्ध भए, मेटत मानस रञ्ज ।।१०।।
जखन जखन सखि देवगण पाओल विधिवश खेद ।
तखन कृपाकए शङ्करी, कएल सकल दुख छेद ।।११।।
जननि-चरण हिअ राखि हम, जाएब माधवगेह ।
प्राण-त्राण मोहि नहि सुखद, कारण सखि तुअ नेह ।।१२।।

अथ चित्रलेखोषाविलापन्निशम्य भाषागीतेनोत्तरमाह :—

सहचरि तोहर वचन सभ सुनि । क्षुब्ध[२] हमर मन धनि सभ गुनि ।।
सिन्धुतीर अछि माधव भवन । अगणित योजन कठिनहि गमन ।।
जे नहि भए सक तस तुअ चाह । कोन गति मदनतनय तुअ नाह ।।
जगतविदित माधव शुभधाम । सभ गुण भरल द्वारका नाम ।।
रवि विधु पवन हुकुम लए जाए । के थिक आन लाख अकुलाए ।।
रक्षक-वृन्द भरल सभ ठाम । बिना हुकुम नहि मानए साम ।।
आठम खण्ड रहथि अनिरुद्ध । हमर गमन धनि परम विरुद्ध ।।
हम अबला जाएब कोन भाँति । सावधान सभ रह दिन-राति ।।
रत्नपाणि भन होएत उपाय । हिअ धरु माधव जगत-सहाय ।।७।।

एतदुत्तरमाह भाषागीतेनोषा । दण्डकच्छन्द :—

सखी-भाषण सुनल ऊषा परम आकुलि भेलि ।
आन के मोहि हीत तुअ सम करब की हम केलि ।।

१—अनल—आगि शीतल भए जाएत । समीहित—अभीष्ट । रञ्ज—खेद । माधवगेह—कृष्णक घर ।

२—क्षुब्ध—क्षुब्ध, आश्चर्यित । मदनतनय—अनिरुद्ध ।

आब की हम प्राण राखब मिलब नहि पहु आज ।
देव-वञ्चित भेलहुँ हे सखि तखन की घनि लाज ॥
बाणतनया प्राण तेजब तेहन निश्चय भेल ।
बूझि से मन चित्रलेखा बचन प्राणद देल ॥
एखन जनु सखि प्राण तेजहु हमर यावत प्राण ।
गौरि तोहि वर देल सहचरि होएत निश्चय त्राण ॥
सुमरि दुर्गाचरण-सारस भजिअ मानस लाए ।
पुरत हे सखि कामना तुअ गौरि भक्त सहाय ॥
देवतासभ विपति पड़ि गेल तखन कएल विचार ।
भजिअ सभ मिलि देवि दुर्गा आन नहि परकार ॥
तखन सरसरितीर गएलहु सखि अराधन भेल ।
छूटल सभ दुख मोदमय भए भवन निज सभ गेल ॥
एहि उत्तर चित्रलेखा कएल दुर्गाभक्ति ।
गगनवाणी तखन भए गेल कार्यसाधनशक्ति ॥
रत्नपाणि विचारि भाखथि सुनिअ देवि विचार ।
सतत दुर्गाचरण सेविअ आन नहि परकार ॥८॥

अथ चित्रलेखा दुर्गां स्तौति पद्येन :—

जय जयकारिणि भव-भय-हारिणि, गिरिश-विहारिणि, शैलसुते ।
महिषासुरमर्द्दिनि, ललितकपर्द्दिनि रणभुवि नर्द्दिनि घोररते ॥
निगमागमसारे, मणिमयहारे, महिमापारे, शक्रनुते ।
सफलीकुरु कामं जननि निकामं पदमभिरामं नौमि गते ॥९॥

अथ स्तुत्यनन्तरमाकाशवाणी बभूव, "गच्छ, आर्ये ! कार्यसिद्धिस्ते भवि-ष्यती"—ति निशम्य चित्रलेखा गुप्तवेषा द्वारकामभिचलिता । मनोजवा सा सिन्धुतीरमगमत् । अत्र भाषागीतम्—

चित्रलेखा चललि मन धए गौरि-पद-युग-कञ्ज ।
[1]गुपुततनु मन-वेग-सम-गति समय शुभ भयभञ्ज ॥

१—गुपुततनु=गुप्त देह कए । अमरावती=इन्द्रपुरी ।

धाए जाए समीप सिन्धुक देखल माधव-धाम ।
धरणि जनि अमरावती लस द्वारका जस नाम ॥
सिन्धुतीर सधीर-मानस ठाढ़ नारद-ऋषि ।
सतत भगवत-चरण-सेवक माङि जीवथि भीखि ॥
भाखि बुझि ऋषि आबि कीदहु ओतए दर्शन देल ।
कहत के किअ भाखि भेलहिं तेहन घटना भेल ॥
रत्नपाणि विचारि भाखथि करहु जनु घनि खेद ।
गौरि-वर थिक अचल भव भरि ताहि पड़त न भेद ॥१०॥

अथ कीदृशं नारदं चित्रलेखा दृष्टवती तत्र भाषया गीतम् । बराड़ीरागे :—

[2]यामिनि कामिनि देखल सिन्धु । एकसरि आन केओ नहि बन्धु ।
ततए देखल धनि नारद-ऋषि । हरि-सेवक जीवथि कर भीखि ।
अर्जुन बसन तिलक उपवीत । हरि-पद-ध्यान करथि दिन नीत ।
दीपित देह तपनसम भास । गमन जनिक सम धरणि-अकास ।
सुतनु विभूति कमण्डलु धारि । पाकल केश बयस युगचारि ।
विधिसुत यतिवर गिरिशक बन्धु । सभगुण अनुपम कलहक सिन्धु ।
रत्नपाणि मुनि दर्शन देल । पुरत मनोरथ से मन भेल ॥११॥

तत्र चित्रलेखां दृष्ट्वा मुनिराह—"अये का त्वमेतादृशान्धतमसे उद्विग्नचित्तेव समागतासि ।" इति निशम्य सा मुनिं प्रणम्याह,—"जगज्जनीन ! हरि-भावनलीन ! देवर्षे ! नारदमुने ! चित्रलेखाभिधाऽहमप्सरास्तव किङ्करी भवामि । यदर्थमागताऽस्मि तद्वदामि"—

अत्र दोहा—

पुरब चरित जत भए बितल मुनिसँ कहल बुझाए ।
सुनि मुनि हर्षित चरित सभ विग्रह पड़ल लखाए ॥१२॥

२—यामिनि=रात्रिमे । कामिनि=सुन्दरी । अर्जुनवसन=उज्ज्वर वस्त्र । तपन=सूर्य । गिरिशक=शिवक ।

अथ मुनिराह दोहा—

कठिन गमन विच द्वारका सभतह रक्षकवृन्द ।
बिनु परिपन्थ[1] न सञ्चरह[2] भाविनि पड़बह फन्द ॥ ४॥
पारिजात - तरु - हरण - रण- समय पराजय पाए ।
बुझल इन्द्र जग से सबल यदुपति जाहि सहाय ॥१५॥
सम्प्रति बाणासुर सबल गौरीवर - वर पाए ।
हरि - बाणासुर - समर हम भावी देखब आए ॥१६॥

अथात्र भाषागीतम्—

एतेक राति अतिअन्ध तमस विच आइलि छह एहिठाम ।
आकुल - चित्त तोहर बुझला पड़ थिकिहु केओ किअ नाम ॥
पुछ्ब चरित सभ कहल मुनिसौं तखन कहल निज नाम ।
तुअ पद - कमल - युगल अवलोकल आब पुरत मनकाम ॥
सकल कथा सुनि मन गुनि नारद उत्तर कहल बुझाए ।
की बुझि तोहु द्वारका चललिहु के तोहि देलक सुझाए ॥
तोहुँ अबला असहाय तखन फेरि जएबहु कृष्णक धाम ।
बायु गमन बिनु हुकुम जतए नहि रक्षक रहु सभठाम ॥
सुरतरुहरण पराजय इन्द्रक तखन सबल के आन ।
तन्हिक आगु बाणासुर के थिक जँ पओलक वरदान ॥
नारदवचन सुनल धनि मन दए तखन कएल बड़ खेद ।
की हम करब कहब की सखिरौं नहि आनल हम भेद ॥
रत्नपाणि भन करिअ सफल मन न करिअ आशा - भंग ।
गौरिक वर नहि चलए जगत भवि आगु देखब गए रङ्ग ॥१२॥

अथ नारदं प्रति चित्रलेखा विज्ञप्तिङ्कुलयति भाषागीतेन:—

सुनिअ सुमन भए हे हे गोचर मन लाई ।
सदय - हृदय भए हे हे मुनि होइ सहायी ॥

पुरिअ मनोरथ हे हे शरणागत जानी ।
भजब हृदय भए हे हे जानब सत बानी ॥
कएल चरित हठ हे हे नहि सूझल दोषे ।
करिअ रोष जनु हे हे राखिअ सुनि तोषे ॥
बाणासुर मोहि हे हे मुनि प्राणसमाने ।
करिअ तेहन मति हे हे तसु राख पराने ॥
माधव - सुत - सुत हे हे अनिरुद्ध बखाने ।
करिअ हमर बश हे हे फल जीवक दाने ॥
रत्नपाणि भन हे हे धनिसुनु चित लाई ।
तोहर विनय सुनि हे हे मुनि होएब सहायी ॥१३॥

अथ चित्रलेखा-सविनयगीतं श्रुत्वा सकरुणो नारदो गीतमाह भाषया—

सुनु सुनु भाविनि न करिअ खेद । हमर वचन मन मानब बेद ॥
तामसि विद्या लएकहु जाहु । छूटत तोरित तोहि विपति अथाहु ॥
तोहि सभ सूतत जत जग लोक । तोहि नहि देखत न करिअ शोक ॥
तोहर दयावश कहल उपाय । हरि धरि मानब पहुँचहु धाए ॥
हरि अनिरुद्ध गुपुत लए जाइ । काजसिद्धि धनि जगत सराहु ॥
गुपुत रहत नहि परगट जान । हरि बाणासुर - समर निदान ॥
आओब हमहु देखबअनि युद्ध । सुनु धनि जखन लड़त अनिरुद्ध ॥
सुनि मुनिवचन कएल परनाम । पहुँचल जाए बीच हरिधाम ॥
आठम खण्ड जतए अनिरुद्ध । रक्षकसौं सभतह अवरुद्ध ॥
ततए देखल गए कतिविध नाच । मुनिहुक धर्म जतय नहि बाँच ॥
कथक आदि सभ गीत अलाप । तन्मय जत छल लोक कलाप ॥
अनुपम देखल रतिसुतधाम[1] । तीनि भुवन राजित जसु नाम ॥
कतिविध सखा करए कत हास । ततए कामसुत[2] करए बिलास ॥
तेहन अवस्था देखिकहु गेलि । हरि अनिरुद्ध हरखमय भेलि ॥

आए गगन-पथ रतिसुत-अङ्क । कएल परस्पर कथन निशङ्क ॥
लए गेलि पलहि उषा-रति-गेह । कहल समुझि लिअ पति अति नेह ॥
रत्नपाणि भन कि कहब चरित । हरि-करुणा भए गेल अति त्वरित ॥

अथ चित्रलेखा वाणसुता प्रत्याह पद्येन:—

गृहाण रतितस्करं मदन - कोटि - शोभाकरं,
मनोभव - सुतं सुतं कमलभू - मनो - निर्म्मितम् ।
रसायनमनालसं कलितसाहसं निर्भयं,
विलोहि रतिसङ्गरं रहसि माधवे माधवे ॥१४॥

अस्याशयो भाषागीतेन लिख्यते यथा—

मदन-तनय तुअ हरिकहु देल । तामसि विद्याबलसँ भेल ॥
सखि हे समुझि लीअ रति-चोर । साहस सकल भेल सभ मोर ॥
देख रतीपति-शत[1] सम रूप । हरि-सुत-सुत[2] धनि जगत अनूप ॥
विधि रचना मानस जनि कएल । सार बनाए पहिल छल धएल ॥
सभगुण आगर नागर तोहि । देल बिधाता त्रिभुवन जोहि ॥
काम-कलाकोविद तुअ नाह । निर्भय साहसि रस-भर चाह ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि आज । चलब समारि निबाहब लाज ॥१५॥

अथोषाह पद्यम्—

धन्यासि त्वं वयस्येऽविदितगतितयाऽसाध्यकर्म्मप्रवीणा,
मत्प्राणत्राणकर्त्री हरिसदनगतानङ्गतामुद्गता सा ।
तामस्या विद्यया ऽहोऽगणितहरिदराऽनङ्गपुत्रं कहर्त्री
किं वक्तव्यं तवाग्रे त्वदुपकृतवशा शुल्कदासी तवाहम् ॥१५॥

अस्य भावो भाषागीतेन—

तोंहे धन्या धनि त्रिभुवन एक । तुअ करुणातह निबहल टेक ॥
अविदितहृदय हरिक गह जाए । हरिसुत सुत हरि आनल धाए ॥

१—सैकड़ो कामदेवक समान । २— कृष्णक पुत्रक पुत्र ।

साहस एहन करत के आन । हमर बचाओल सहचरि प्राण ॥
तामसिविद्या मुनिसँ पाए । कएल सिद्ध सभ मानस लाए ॥
तुअ उपकार कहब कत आज । हम तुअ सुदिनि[3] ताहि नहि ब्याज ॥
रत्नपाणि भन तहिखन नेह । न गुनिअ प्राण त्राण निज देह ॥१६॥

अथ सर्व्वा जातगर्व्वा विदितरहस्या वयस्या बहिरुपगत्य विविशुः । अथ रहसि बणात्मजोक्तं भाषया गीतमनिरुद्धं प्रति—

कि कहब यादव तोही । दए सुख आदि अन्त निरमोही ।
तुअ विरहानल-दापे[4] । नीरस दारु[5] अनल तनु तापे ।
विधिवश तुअ पुनु सङ्गे । पुरत मनोरथ शमित अनङ्गे ।
संशय पड़ल पराने । पहु तोहि देखि देखि भेल मोर शाने ।
रत्नपाणि पहु लाई । विधि रचना फेरि देल भुलाई ॥१७॥

अथोषां प्रत्यनिरुद्धो भाषागीतमाह :—

कि कहब कामिनि आजे । सपन शपन गति कहइत लाजे ॥
न बुझल अन्तरलीने । आगर धनि तुअ भेलहुँ अधीने ॥
जनहिँ मानस मोही । असह बिरह देल कि कहब तोही ॥
सपन देखल तुअ रूपे । एहुखन देखिअ कला अनूपे ॥
आब उचित रति-सारे । करिअ कमल-मुखि प्रेम-पसारे ॥
कए गन्धर्व्व-बिवाहे । पुरओ मनोरथ अपनिअ हारे ॥
रत्नपाणि भन धीरे । रमिअ दुहू मिलि कए मन थीरे ॥१८॥

ततः कामशास्त्रकलाकोविदोऽनिरुद्धो गान्धर्व्वं विवाह विधाय सुषमावधिभूतया वाणसुतया रेमे । अथ रतिसमयस्य गीतं भाषया । दण्डकच्छन्दः —

तखन दम्पति वसन फेकल, हार कएलन्हि दूर ।
अङ्ग अङ्ग अनङ्ग सुखमय भेल मानस पूर ॥

३—सुदिनि, पाचिका ।
४—विरहरूपी आगिक ज्वाला सँ । ५-सुखाएल काठ जकाँ आगि देहकेँ जरबैछ।

सुरति रति विपरीत कएविध, कएल गुण द्रुगबन्ध ।
अमृत सुखमय भेल तनमय दुइ लोचन अन्ध ॥
तखन देखल सतनु अतितनु कएल मानस चेत ।
मधुर मधु पिबि आगु ताकल फेरि के सुख देत ॥
रतिक सङ्गर भङ्ग कएलन्हि मधुर लागल बोल ।
तखन विधु-मुखि बिहुँसि बाजलि एकक बोल अमोल ॥
रत्नपाणि विचारि भाखथि कएल समुचित काज ।
चलब आब समारि दम्पति सभ बचाबए लाज ॥१८॥

अथ रतिसुखानन्तरं मदनतनयो वसन्तवर्णनं भाषागीतेन करोति । यथा—

देख देखु भाविनि सरस वसन्त । बड़ तसु भाग निअर[1] जसु कन्त ॥
[2]परिमल मन्थर मलय समीर । चलए न पाड़ भार गति थीर ॥
कोकिल कलरब पञ्चम राग । उचित समय धनि अति अनुराग ॥
जगमग यामिनि चान विकास । विधिवश दम्पति करए विलास ॥
तरु तरु मधु पिब मधुकर-पुञ्ज । भमए रमए धनि कुसुमित कुञ्ज ॥
देखु सरोवर सारस सोभ । कि कहब देखि होअ निधुवन[3]-लोभ ॥
नागर नागरि समुचित पाए । लाख रमित नहि रसिक अघाए ॥
रत्नपाणि हरि उपगत जाहि । सभ सुख जानब समुचित ताहि ॥२०॥

अथ पुष्पवाटिकां दृष्ट्वा पुनराह गीतं भाषया—

कतहु बेलि चमेलि किंशुक बकुल चम्पक शोभही ।
मदन बकहुल कनक पाड़रि ततए रम अलि लोभही ॥
सरल शाल तमाल कुंकुम कुमुद लस करवीरही ।
कहब कत हम कुसुम कतविध देखि नहिँ रह धीरही ॥
देखु उपवन परम शोभित कोकिला कल गावही ।
चलिअ कामिनि काम कौतुक करिअ मानस भावही ॥

1—निकट । 2—सुगन्धि सँ । 3—रतिक

बहए मारुत मलय-सम्भव कुसुम-सौरभ संगही ।
कुञ्ज गुञ्जत पुञ्ज मधुकर उपजु काम तरंगही ॥
चमक चानक चाननी निस रमए युव-जन भावही ।
[1]मकरकेतुक हेतु निधुवन[2] दीस मानस धावही ॥
देखि तुअ तनु अनुप शोभा धीर नहि रह आजही ।
रमय सन्त वसन्तऋतुवश करए निबहए लाजही ॥
रत्नपाणि रमेश कामद तखन जीवन सारही ।
हास कए परगाश आनन दूर कए हिअ हारही ॥२१॥

अथ रत्युत्कटेच्छमवेक्ष्य हृच्छयवशादनिरुद्ध प्रति बाणजा तदुत्तरमाह भाषागीतेन—

तोहि हम पाओल विधिवश कन्त । जानब बारम सतत वसन्त ॥
अति नहि चाहिअ पहु सभ काज । धरज धरिअ निबाहिअ लाज ॥
तनु अति तनुक अतनु तनु जोर । तुअ सङ्ग पाए छुटल दुख मोर ॥
त्वरित उचित नहि निधुवन चाह । के अग मर्दित कुसुम सराह ॥
धैरज धरिअ करिअ नहि रोष । दम्पति जानब एक मति तोष ॥
देखिअ जखन जेह जसु रीति । तेहन करिअ पुनु निबहए प्रीति ॥
मानिअ मर कहल मन लाए । सदय हृदय भए रहिअ सहाय ॥
रत्नपाणि भन मन अवधारि । करए काज बुध समय विचारि ॥२२॥

अथ निद्रातुराणां यथा न शय्याभूमिविचारस्तथा कामातुराणां न समयविचार इति समीक्ष्य बाणपुत्र्या मानमकारि । तद्विषये दोहा—

रति लोलुप पहु देखिकहु तखन कएल धनि मान ।
[3]आरत लोचन मौन गहि बैसलि विमुखि निदान ॥१७॥
तेहन तरह देखि रति-तनय[4] अति आकुल मन भेल ।
[5]दृष्टिकूट-तनु गीत कहि मान-दोष हरि लेल ॥१८॥

1—कामक । 2—रति ।
3—लाल । 4—अनिरुद्ध । 5—गूढाशयवला जटिल पद्य, पहेली ।

अथ मानभञ्जनगीतमाह—

उचित होरित[4] रसदाने ।
असमय समय मान नहि चाहिअ विकल करए पचबाने[5] ॥
[6]बिनु कर मधुकर पान यतनपर बए हलु रजनि[7] बिहाने ।
[8]तम अरि ता अरि भवन सुतानन से किअ करह मलाने ॥
[9]खग पति पति सुत अरि अरि सुन्दरि विधुहित[10] लोचन राजे ।
[11]हरि हरि, हरि-सुत-तिअ[12] दिअ मानिनि ताहि न करिअ बेआजे[13] ॥
[14]गिरिधर अधर पयोधर भूषण तापर मोतिम हारे ।
जनि धर[15] शिखर उपरसँ लम्बित बिम्बित सुरसरि-धारे[16] ॥
[17]गगन गुणित कए आगमवश कए कामिनि कौशल मोरा ।
रत्नपाणि भन तखन उचित कोन गिरि[18] सम गरुअ निहोरा ॥२३॥

अथ पत्यनुरागवशानुषा स्वयं गीतमाह—

तेजल मान हम तुअवश रे, न करिअ पहु रोषे ।
प्राण-त्राण मोहि तुअ कर रे राखिअ परितोषे ॥
कत हम देव अराधल रे, पुरबिल फल मोही ।
आए तुलायल विधिवश रे, पति पाओल तोही ॥
करिअ काज पहु समुचित रे, नहि पाबिअ खेदे ।
हमर कहल हिअ राखब रे, जानब पुनु बेदे ॥

४—त्वरित, झट । ५—कामदेव । ६—हाथ-रहित भमर । ७—राति बिताय भोर कय देल । ८—गाछक शत्रु आगि, तकर शत्रु जल, तकर भवन समुद्र, तकर सुत चन्द्रमा, तत्सदृश आनन अर्थात् अपन चन्द्रमुखकें । ९—पक्षीक पति गरुड तनिक पति विष्णु तनिक सुत कामदेव, तनिक शत्रु महादेव, तनिक शत्रु कामदेव, तत्सदृश सुन्दरी । १०—चन्द्रक समान हितकारी शीतल । ११—हाय हाय । १२—विष्णुक पुत्र कामदेव, तनिक स्त्री रति अर्थात् समागम । १३—व्याज । १४—पर्वत रूपी देहक उपरका भागक नीचाँ, अथवा गिरिधर कृष्ण अर्थात् कारी स्तनक अग्रभाग ताहिसँ नीचाँ स्तनक गहना । १५—उपरका भाग । १६—गंगाक धार । १७—आकाश अर्थात् शून्य सँ गुणा कए हमर कौशल कें शून्ये बुझ । १८—पर्वत सन भारी ।

रसमय समय पाए पुनु रे, करु पहु सुखसारे ।
सदय हृदय भए जानब रे, किछु करिअ बिचारे ॥
मदन-मनोरथ पूरल रे, बीतल अभिसारे ॥
विधिक चरित-गति के बुझ रे, जत प्रेम-पसारे ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि रे, देखिअ हिअ लाई ॥
कैहन असम्भव सम्भव रे, विधि देल तुलाई ॥२४॥

अथैतस्मिन्नेव समये बाणान्तःपुरे विचित्रचित्रादिमण्डिते कुमारीखण्डे उषानिरुद्धयोः परस्परं रसकथालापकलापं निशम्य रक्षादक्षा रक्षका राक्षसाश्चयश्चकितचित्ता बभूवुः "आश्चर्यमाश्चर्यं कोऽप्यपरिचितेन साकमालापकलापमुषा करोति । गगनकुसुममिव प्रतिभाति" । ततो मनसीति विचिन्त्य सगर्वाः सर्वे ते बाणसमीपमाजग्मुः । अथ गत्वा ते तं जगदुः "हे देव ! सुरगर्वखर्वीकारकाखण्डप्रताप ! मार्तण्डमूर्त्ते ! यशोजितराकारमणकीर्त्ते ! किं वदामो वयम् ! कुमारीखण्डे कोऽपि पुरुषोऽपरा साकमालापं करोतीति निश्चित्य वयमागताः स्मः । यथाज्ञा तथा कुर्मः ।" "रे यूयं किं वदथालीकम् ।" "प्रभो ! सत्यमेतत्" । "किमत्र मानम्" । "पुरुषवागनुमानञ्च ।" "कोऽयमेत्यासाध्यकर्माकरोत् ? भवतु नाम कोऽपि । स आततायी हन्तव्य एव । कोऽत्र विचारः ।" अथेति प्रभोराज्ञां गरीयसीमवगत्य शस्त्रास्त्रधराः सर्वेऽनिरुद्धनिधने कृतनिर्बन्धा अनिरुद्धसमीपमाजग्मुः । ऊचुरपि ते—"कस्त्वमनर्थकारित्वमागतोऽसि । रे रतिचौर ! गतायुरिव प्रतिभासि । बहिरागच्छ । तव मुखं पश्यामः कीदृशोऽसीति ।" बाणासुरपक्षरक्षक-वचो निशम्य उषाऽशनिपातमेवामन्यत । किञ्च वदतिस्म—"हा हतास्मि । हे विधे ! रंग एव भंगः कृत" इत्युक्त्वाऽनिरुद्धं पद्याभ्यामुपदिशति । प्रथमं यथा—

एकस्त्वं बाल एवाविदितरणगतिः का धृतिस्ते बलं वा,
किं शौर्य्यं बल्लभाजौ स्वजनविरहितः किङ्करिष्यस्यनाथः ।
आहूता बाणदूतास्तव निधनपरा भूरि गर्ज्जन्त्यनार्य्याः,
किं कुर्व्वे हा हतास्मि त्वदरिचयलये जीवने जीवनं मे ॥१७॥

किञ्च,

का लज्जा मञ्जुशय्या किमिह मम सुखं त्वां विना के च लोकाः,
शोकाकाराः समस्तास्त्वयिह तव पुरस्त्यक्तजीवा भवामि ।
कल्लोलः का च माता भवति कुलवधूनामये ! दैवमेकम्,
स्वामी योऽनन्तसौख्यं दिशति किल भवे कोऽपि नैतादृशोऽन्यः ॥१८॥

अथ गीतञ्च—

अब मोहि जागर सपन समान । तुअ बिनु जीवन विपति-निदान ॥
अब मोहि उचित अनल परवेश । पहुक आगु तिल बदलए बेश ॥
हमरहि चरित भेल एत दोष । की हम कहब तखन बिचिरोष ॥
कएल गुपुत हम परगट भेल । धैरज हमर सकल दुरि गेल ॥
गिरिजा - वरक धएल हम आस । क्षणहि पुरित भेल सकल बिलास ॥
की बुझि राखब जिवक भरोस । लाखनि फौज भरल सभ रोस ॥
रत्नपाणि हरि धरु चित लाए । पुरब मनोरथ अपनहि आए ॥२५॥

अथैतदुत्तरमुषां प्रति अनिरुद्ध आह पद्याभ्याम्—

कृष्णो देवि पितामहो मम, पिता प्रद्युम्ननामा भवे,
मायावी बलभृत् कृताजिनिचयो विख्याततेजोभवः ।
कंसाद्या निहताश्च बाल्यसमये ये वा रणेऽन्येऽसुरा,
देवेशोऽपि जितो हृतोऽपि कलहे भू-पारिजातागमे ॥१९॥

किञ्च,

सिंहाद्याप्तजनुर्न सीदति भवे वृन्दे द्विपानां प्रिये !
खेदं मा कुरु यामि सङ्गरभवं नाहं जनः प्राकृतः ।
सङ्कष्टे समुपागते विधिवशाज्जानीहि तारागतौ,
तार्क्ष्यारोहणतत्परौ गुरुतरौ कोऽयं हि बाणासुरः ॥२०॥

अथानिरुद्धो गीतमप्याह नृगिरोषां प्रति, यथा—

बाणसुता न करिअ मन त्रास । धैरज धरिअ पुरत सभ आस ॥

नारद मुनि बुझल सभ चरित । हरिसँ जाए कहब मुनि त्वरित ॥
हम गए लड़ब करब मन पूर । [1]आहुत भए नहि बिलमए सूर ॥
मायायुद्ध बुझल नहि मारि । ताहि कदाचित हमरो हारि ॥
विधिवश सेहन होएत जँ बेरि । कृष्णागमन तखन नहि देरि ॥
अबितहिँ कृष्ण करब परकार । निश्चय जानब हमर विचार ॥
मोहि जनु रोकिअ जाएब रङ्ग । त्वरित करब असुरक बल भङ्ग ॥
दए विश्वास चलल अनिरुद्ध । दश गुण देह बढ़ल जनि क्रुद्ध[2] ॥
रत्नपाणि मन कृष्णक आस । तखन कहाँ जग ककरो त्रास ॥२६॥

अथ महाकायो भूत्वा गृहीतासिरशनिपात इव निशाचरचमूचयेऽपतत् । अत्र दोहा :—

कृष्ण-चरण मन शरण कए, बल विध कएल प्रकाश ।
जनि कानन-बिच दैववश, उपगत प्रलय-हुताश[3] ॥१९॥
देखितहिँ रिपुबल चकित-चित, भयतह सकल उदास ।
[4]दन्तावल बलसिंह लखि, बिचलए बलक हरास[5] ॥२०॥
[6]एकत कतिविध उरगगण, गरल बेआपित देह ।
[7]विनतासुत लखि त्रासवश, के न जाथि फणि गेह ? ॥२१॥
[8]असि-विद्युत-चय चमकि जनि, दशगन तनु भए गेल ।
[9]मुद्रित-लोचन असुर-जन, त्रास-ह्रास तनु भेल ॥२२॥
एहन पुरुष नहि दृष्टिपथ, अति साहस परधान ।
पवन गमन नहि हुकुम बिनु, ततए समागम ध्यान ॥२३॥
सभ मिलि ततमत की करह, करह सबहु संग्राम ।
जनन मरण नहि अपन वश, राखब तेँ जग नाम ॥२४॥
एक कहाँ धरि बाँचिकहु, पहुँचत गए निजधाम ।

१—आहुत (बजाओल) भेला पर वीर बिलम्ब नहि करैत छथि ।
२—आगि क्रुद्ध भेला पर दस गुना शरीर धय लैछ ।
३—प्रलयकालक अग्नि । ४—मत्ता हाथी । ५—ह्रास । ६—एकत कतेको विषमय सर्प । ७—गरुड़ कें देखि डरेँ । ८—तरुआरिरूपी विद्युतराशि चमकि कें । ९—असुरसभक आँखि मुनाए गेल ।

तेहन मनोरथ जानि मन, आब उचित संग्राम ।।२५।।
बहुत गवेषण कए असुर, लाग्नल सभ मिलि युद्ध ।
अति हरषित भए सुरगति, समर कएल अनिरुद्ध ।।२६।।

अथ दण्डकच्छन्दः :—

तखन यदुमणि एहन भए गेल कलित—कोप कराल ।
असुर-जाल पतंग-सम भए खसए दीप विशाल ।।

धारि खर तरवारि कर धरि रिपुक अस्त्र समारि ।
काटि छट छट रिपुक मस्तक त्राहि कृष्ण पुकारि ।।
जतेक छल रिपु खेत जूझल बाँचि गेल गोट चारि ।
तखन जाए पुकार कएलक अपन सबहिक हारि ।।
''कहब की हम बाण भूपति पुरुष रणबिच आज ।
परम सुन्दर जितपुरन्दर[1] बीर कर असि[2] छाज ।।
क्षणहि रण बिच असुर जूझल ताहि भेल न देरि ।
पुरुष एक अनेक जनि भए कएल असुरक ढेरि'' ।।
दूत-वाचिक सुनि भूपति क्रोध-कलुषित भेल ।
अपन साज समाज साजित रङ्ग-भूमि[3] चल गेल ।।
आए नारद गगनपथ-गति देखए कयो नहि आन ।
मदनसुत एक ऋषि देखथि करथि आशिषदान ।।
बाणभूपति सङ्ग बहुबल रङ्ग जूझल देखि ।
[4]ज्ञानमान विमानसौं नृप कहल वृत्त विशेषि ।।
विबुध दानव दैत्य मानव कोन वंशक थीक ।
रत्नपाणि विचारि देखिअ भूप-रक्षण नीक ।।२७।।

अथ छन्दोऽन्तरेण बाणोक्तं गीतम्—

चौदिश रक्षक मानव भक्षक कोटि कोटि रणवीर ।
बाण हुकुम बिनु बहथि न कहुखन जे पुनु मलय-समीर ।।

''परिखा[5] तेहन जलधि-सम चौदिश चौदिश बरए हुताश[6] ।
आबि सकए नहि सकल सुरासुर सब जन मानथि त्रास ।
ततए आबि तनय। कुपित कए पहुँचल सङ्गर बीच ।
कतेक असुरबध कए साहसमय ठाढ़ रुधिरमय कीच ।।
चाहिअ एहन नृपति-दल अतिबल देखि असह अपराध ।
तखन एहन दुर्जन नहि राखिअ दिन दिन दोष अगाध ।।
तखन फेरि रण भेल बहुत बिध नहि थाकथि यदुबीर ।
बाण असुर मन भेल बेआकुल नहि रह मानस धीर ।।

देखि विमान कहल ''सुनिअ नृप करु माया-संग्राम ।
तखन पराजित होएत बीर पुनु पुरत मानस-काम'' ।।
कहल विमान सुनल बाणासुर अन्तरहित[1] भए गेल ।
नागफास लए यदुपति बान्धल तखन अवश भए गेल ।।
हरषित भेल तखन बाणासुर गहल हाथ तरुआरि ।
बधए चलल रतिपति-सुत[2] तहिखन हटल विमान विचारि ।।
''करिअ विचार थीक कोन वंशक निश्चय कए सभ बूझि ।
जेहन उचित नृप तेहन करब पुनु हमरा पड़इछ सूझि'' ।।
समुचित कथा नृपक मन आएल दए रक्षक चौदीश ।
ऊषा चरित चकित-मन भाखथि व्याकुल मन अति रीश ।।
उषा सुखाइलि तड़ित-रेह-तनु[3] धुक धुक भीतर प्राण ।
निज-पति-गति देखि परम बेआकुल हरि बिनु के कर त्राण ।।
एहन तरह देखि सचकित नारद मानस कएल विचार ।
जाए द्वारका कृष्ण बुझाओब होएत तखन परकार ।।
नारद कहल तखन रतिसुतसँ न करिअ मानस खेद ।
आए कृष्ण दुख फेरब तहिखन ताहि पड़त नहि भेद ।।२८।।

★ ★ ★ ★

१—इन्द्रहु केँ जितनिहार। २—तरुआरि। ३—युद्ध भूमि। ४—ज्ञानी कार्यदक्ष कायस्थ, धीमान् (धीसचिव) देवानजी।

५—महलक चारू भरक विशाल खत्ता। ६—आगि।
१—अदृश्य। २—अनिरुद्ध। ३—बिजलीकाक रेखाक समान देहवाली।

अथानिरुद्धापहरणं यदा जातं तदा द्वारकायां किमभवदित्याह तटस्थः भाषागीतम् :—

तखन द्वारका भए गेल सोर । रतिपतिसुतके हरलक चोर ॥
देवकि रुकुमिनि रतिक बिलाप । सनि कहु ककर हृदय नहि काप ॥
के मोर हरलक चान चकोर । तीनि भुवन हरिसौं के जोर ॥
सभ कह सभ मिलि तेजब प्राण । पाओब रतिसुत तेहि पए त्राण ॥
तखन कृष्ण मिलि सभ परिवार । एकत भए कहु कएल बिचार ॥
के जग करत हमर अति मन्द । ककर छोड़ाओल अछि नहि फन्द ॥
सुर सुरपति नर जत भव लोक । हमर दुःख ककरा नहि शोक ॥
सभ यादव मिलि कएल बिचार । के हरलक रतिपतिक कुमार ॥
जकर तकर सभ कहलक नाम । कृष्ण नकारल एकहि ठाम ॥
तखन कृष्ण निज कहल बिचार । सुनिअ सबहु हरणक उपचार ॥
क्यो कुलटा तिअ तकरे काज । भल मन एकहुक नहि जसु लाज ॥
हमर कहल राखब मन लाए । क्यो मुनि गण कहलक पए आए ॥
फौजि पठाबिअ जनु सभ दीश । पुरब मनोरथ श्रीजगदीश ॥
कृष्ण कथा सुनि यादववृन्द । साधल मौन भेल मतिमन्द ॥
कृष्ण सभाबिच शोभथि तेहन । [४]उडुगण मध्य कलानिधि जेहन ॥
[५]कृष्णानन सबहिक दृग कोर । तेहन शोभ जनि चान चकोर ॥

अथैतस्मिन्नेव समये श्रीकृष्णसभायां यादवमण्डलीमण्डितायां कलिविशारदो नारदो "हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे । हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे" इति षोडश नामानि प्रजपन्नुपसमागमत् । ततः सर्व्वे यादवा उत्थाय मुनिन्तं प्रणेमुः । ततः स सकृष्णानपि यादवानाशीर्भिरभिवर्द्ध्य वरासन उपविवेश । ततः 'हेकृष्ण कुशलवसीति ?" मुनिराह । "तवागमादि"त्युत्तरम् । "हेकृष्ण सर्व्वे यादवा उत्कण्ठितचित्ता एव दृश्यन्ते । किमत्र कारणमिति" गां मुनिर्बभाषे । तद्बीजं कृष्ण आह "मुने गतायामिशि

अनिरुद्धापहरणमभूदिति केनापहृत इति वयं सर्व्वे न विद्मः । त्वं सर्व्वज्ञोसि, कदाचित्तद्वृत्तं भवद्विदितमित्येवं मन्ये" । ततो मुनिरट्टाट्टहासं कृत्वा कृष्णमाह—'हे जगन्निवास ! तवाप्यग्रे सर्व्वज्ञोऽहमिमि तर्हि प्रतारयसि । तथापि वृत्तमिदमहं जानामि तद्वदामि ।" ततश्शंकराद्बाणासुरवरदानमवशीकृत्यानिरुद्धनागपाशबन्धनपर्य्यन्तमशेषवृत्तामभाषत ।

अथ भाषागीतम्—

तखन कृष्णमन उपजल क्रोध । प्रलयानलक करत के रोध ॥
देल हुकुम सङ चल चतुरङ्ग । शोणितपुर गए लागत रङ्ग ॥
बाणासुरक करब मद-भङ्ग । कहाँ पुरुषसँ कएलक [६]जङ्ग ॥
होअओ तयारी न कर बिलम्ब । रतिसुतकाँ नहि क्यो अवलम्ब ॥
नागपाश बान्हल छथि बाल । मामक-मानस[७] एक मराल ॥
होइछ एहन मन एकसर जाए । बाणासुर-भुज काटिअ धाए ॥
कृष्णक मनक समीहित[८] सुनि । नारद कहल तखन मन गुनि ।
सुनिअ कृष्ण हमर किछु कहल । तखन तयारी कहबा रहल ॥२०॥

अथ पद्यं नाह नारदः—

कृष्ण ! त्वं गच्छ गच्छ क्षणमपि न भवेद् गीतकीर्ते ! विलम्बो नप्तारं रक्ष रक्ष क्षणद यदुमण ! दक्षरक्षाचलोसि । व्यक्षादिच्छावरान्तं जहि विबुधरिपुं वीर बाणासुरो यस्तत्पुत्री पुण्यपात्री विलपति यदहं नेतुमत्रागतस्त्वाम् ॥२१॥

तदुत्तरं कृष्ण उवाच—

गच्छत्वग्रे च सेना सपरिकरतरा यादवास्ते सुसज्जा,
गत्वा पश्यन्तु सर्व्वे समरभुवि मुने मद्भुजानां विलासः ।
चक्रेणानेन कुर्व्वे सकलभुजपरिच्छेदनं बाणनाम्नो
यो वा शंकरया सहायस्तमपि कृतकलि कोपितं तोषयामि ॥२२॥

४ - तारगणक बीच चन्द्रमा । ५ - कृष्णक मुख सभक आँखिक कोर मे छल ।

६ - युद्ध, फारसी शब्द । ७ - हमर मन रूपी मानस सरोवरक हेतु हंस ।
८—अभीष्ट ।

एतदुत्तरं नारदः पुनराह—

सेनायाः सा न गम्या दिशि विदिशि बहिस्सर्वतो जातवेदः

तत्पारे कोऽपि गन्ता भवति न सहसा या पुरी शोणिताङ्का ।

प्रद्युम्नं पूर्वजञ्च स्वयमपि गरुडं तत्समारुह्य नीत्वा,

गन्तव्यं बाणगेहे कलितनवभुजः क्रोधमूर्त्तेऽतिकीर्त्ते ! ॥२३॥

कृष्णमाह खगपतिः—

स्मृते खगेशोऽहि समागमत्तदा स्तुत्वा हरिन्नाम ननाम दण्डवत् ।

उवाच हेकृष्ण करोमि किं यथा तथा यदाज्ञामिह तत्करोमि ते ॥२४॥

ततः कृष्ण आह—

रूपातोऽसि हेमित्र विचित्रतामितः सुदर्शनस्याथ तवेह विक्रमात् ।

चलाशु बाणासुरगर्वखर्वताविधानहेतो विनतासुताधुना ॥२५॥

ततः खगेन्द्रारूढागुरुडाशया उपेन्द्रबलदेवा जातवेदः समीपं जग्मुः । ततः किञ्चाभवदित्यन्तारक्षतो नारद आह पद्येन :—

प्राकारं वीक्ष्य वाहूरतिविपुलतरं भासयन्तं ज्वलन्तं,

गोलोकाधोगतस्तं क्षुभित इह परं तत्कथं यामि चेतः ।

ध्यात्वा गत्वा च नीत्वा कलशभवगतिः पुष्करौघञ्च गाङ्गम्,

व्यादायास्यं कृतार्थो व्यथितुमिति तदादाय कृत्वा खगेन्द्रः ॥२६॥

ततः कृतप्राकाराभिनिव्यया वैनतेयारोहणपराः कृष्णसंकर्षणकामदेवा असुरदेवपुरीपरिसरंवव्रजुः । तत्र बाणासुररक्षकाः कृष्णादीन् समीक्ष्य सक्रोधा वदन्तिस्म । "के भवन्तो गरुडारूढा ? अग्रे मा गच्छत" इत्युक्त्वा बहवो दूता बाणसमीपमेत्य जगदुः । "हे देवदेव नागपाशबद्धस्यानर्थकारिणस्सहायतार्थमेव गरुडारूढास्त्रयो जनाः समागतास्तिष्ठन्ति तद्विषये यथाज्ञा ते तथा वयं कुर्म्मः" । "रे रक्षका मदाज्ञां विना समागतास्चेत्तर्ह्यसाध्यकर्म्माणस्ते हन्तव्या एव । कोऽत्र विचार ?' इतिप्रतिश्रुत्य रक्षकास्ते कृष्णादिभिर्योद्धुं सन्नद्धाः समागताः । अत्र दोहा :—

हुकुम पाए सभ धाएकहु, कए सेना चतुरंग ।

अस्त्र शस्त्र गहि लक्ष शह आरम्भ कएलक जंग[1] ॥२७॥

[2]कृष्ण-सुदर्शन दहन-बिच पड़िगेल असुर-पतंग ।

हलधर-हल कृत ताड़ना ककर अंग नहि भंग ॥२८॥

[3]काम , सुमशर अशनि जनि, खसए असुर रण-बीच ।

[4]विनतासुत नख दलित रिपु रकत ऊठ सम मीच ॥२९॥

कि कहब तखनुक थीति हम कृष्ण-आदि जन चारि ।

[5]हेला हरषित समर बिच लक्ष लक्ष रिपु मारि ॥३०॥

किछु बाँचल जे असुर जन, बाणासुर तट जाए ।

सूनि चरित सब त्रसित मन, देल हुकुम अकुलाए ॥३१॥

तखन तआरी कएल रिपु, [6]वैरोचनि रथ जाए ।

सायुध सपरिवार मिलि, रण भुवि पहुँचल आए ॥३२॥

कहल कृष्णसँ कोप कए बाणासुर अतिशूर ।

[7]भुज कण्डुति मम दूरि कए, करहु मनोरथ पूर ॥३३॥

के नहि जानए हमर, तीनि भुवन परधान ।

तापर शम्भु सहायता, के अछ हमर समान ॥३४॥

इति बाणासुरगर्वगिरं निशम्य वासुदेव आह—

अपन प्रशंसा उचित नहि, गुण बुझि आन सराह ।

चित्रकार कह हमहि विधि, से जग बुझब अथाह ॥३५॥

[8]पीन काय बल हेतु नहि सत्ता बलक निदान ।

बलिकृत वामन-याचना, समय चरित जग जान ॥३६॥

गिरि-सम तनु गज लक्षसह, ताबिच सिंह समाए ।

एक सकल दलमलित कए, गजशिर-मुक्ता खाए ॥३७

१—युद्ध । २—कृष्णक सुदर्शन-चक्ररूपी आगिक बीच मे असुररूपी फतिंगा पड़ि गेल । ३—कामदेवक फूलक बाण वज्र समान । ४—गरुडक नहसँ चीरल । ५—अवहेलनासँ उपेक्षा पूर्वक । ६—विरोचनक पौत्र बाणासुर ७—बाँहिक कुड़िऐनी । ८— मोट देह ।

राम तनुक अति एक पुनु, जाए हतल दशशीश ।
तोहर[१] पितामह हतल हम, नरहरि तनु जगदीश ॥३८॥
तोहर गर्व्व हम खर्व्व कए, काटब दश-शत बाहु ।
प्रगट होएत सभ लोक बिच, जनि बिधु ग्रासए राहु ॥३९॥
पुरब कएल हम बिबुध मिलि, देवासुर-संग्राम ।
सकल असुर-जन मारि पुनु, पुरल इन्द्र मन-काम ॥४०॥
तुअ भुज-कण्डुति शमन कए, तखन बजाओब नाम ।
अब किअ करह बिलम्ब रण, बाणासुर निज धाम ॥४१॥

इति कृष्णोक्तमवगम्याऽ 'सुरारिरयमिति' मनसि बुद्ध्वा जनिजुषो जननमरणे नियते एव तर्हि विष्णुद्वारा शमनञ्चेद्वरमेव मन्ये । का चिन्ता मरणे रण इत्यप्याजानकी श्रुतिरतो रणात्पलायने निरयमेव ततो युद्धान्तरमकरोत् ।

अथ छन्दोन्तरं भाषा :–

साजि गज रथ बाजि भूबर बिबिध आयुध सङ्ग ।
कहब की हम रङ्ग रचना व्यूह कतिविध भङ्ग ॥
असि कराल बिशाल चमकए, शक्ति-पट्टिश-जाल ।
पाश मुद्गर भास चौदिश चापधर कए ब्याल ॥
युद्ध सभ दिश जाए लागल, कहब की तसु भेद ।
बाण प्राणक आस ताकथि, करथि मन बहु खेद ॥
कृष्ण-कर वर चक्र चमकए, देखि नहि सक लोक ।
अन्ध बन्ध कबन्ध ऊठल, भेल रिपु दल शोक ॥
तेजि प्राण कृपाण अध-भज, गहल बहुविध चाप ।
बरिस शर जनि बारि बारिद, करए गर्ज्ज-कलाप ॥
आश धरि नहि हमर सङ्गर, भेल दोसर ठाढ़ ।
आज यादव तोहि पराभव, होएत मोहि तह गाढ़ ॥

२—वृद्ध प्रपितामह हिरण्यकशिपु । बाणक पिता बलि, तनिक बिरोचन तनिक प्रह्लाद ओ तनिक हिरण्यकशिपु ।

सुनि यदुमणि कुपित-मानस, रचल आयुध ढेर ।
तुअ बलिसुत रुद्ध भए गेल, बिकल मानस भेर ॥
मानि हारि बिचारि बलिसुत, गेल शंकर पास ।
कहल निज दुख बान्हि कर-पुट, पुरिअ भगतक आस ॥
तखन हसिकहु कहल शंकर, "बाहु-कण्डूति तोहि ।
छूटल, निज घर जाए बैसह, कहह की फेरि मोहि" ॥
"देव तुअ पद शरण सेबल, छमिअ सत-अपराध ।
करिअ जाए सहायता मम, हरिअ दुःख अगाध" ॥
भगतबश शिव आजि[१] पहुँचल, प्रमथ-गण सङ लाए ।
कृष्ण देखि बिशेष हरषित, शम्भु बाण-सहाय ॥११॥

कृष्ण आह शिवं प्रति :—

बाण सुर-अरि विदित शंकर तकर कारण आज ।
तखन मोहि तोहि युद्ध संभव, तकर होइछ लाज ।

उत्तरं शिव आह :—

भक्त-वश हम जगत जानए, सुनिअ यादव-राज ।
कहल से फेरि जखन फेरब, तखन को जिब काज ॥
तखन बलिसुत सबल भएकहु, फेरि लागल जंग ।
तखन सभ मन भेल सचकित, किदहु भावि-तरंग ॥
समर-निर्दय सदय हरि भए, चक्र कएलकराल ।
असुर-बल-बिच जाए फेरल, शमित-सुर-रिपु-जाल ॥
तखन हलधर मदन खगपति, कएल कोप-बिकास ।
कतेक बाणक फौजि जूझल, कुञ्ज-पुञ्ज हुताश ॥
देखि हारि बिचारि सिरजल, शम्भु ज्वर बिकराल ।
जाए हलधर-तनु समाएल, बढ़ए हिअ अतिज्वाल ।
तखन हरिसँ कहल हलधर, उठए तनु अति धाह ।
करब की हम अवश भेलहु जेहन नाम गराह ॥

१—युद्धभूमि मे ।

हरिक तनु जर आए पहुँचल तखए कएलक कोप ।
तखन हरि-मन एहन भए गेल, करिअ हर-जर लोप ॥
तकर कारण हरि विचारल, करिअ किअ परकार ।
हमहु सिरजिअ एहन जर भर, असह अति विकरार" ।
तखन सिरजल सौरि[1] निज जर, हन्त अन्त हुताश ।
अपन सबहक जर निकासल, शेष जर हत-आश ॥
निकसि हर-जर धाए सविनय, खसल हरि-पद आए ।
करए लागल बहुत गोचर, नाथ लीअ बचाए ॥
सदय भए हरि सुनि विनती, गिरिश-जर-भर काटि ।
तखन माधव भाग कए पुनु, देल जगभरि बाँटि ॥
हरिक सिरजल जर पराभव सकय के जग आन ।
सदय भए हरि मन विचारल देखि रूप भयान ॥
सुनह निज जर असह आग भरि, सहत के तुअ चाह ।
हमर तनुबल अन्त बुझिकहु तखन पर-तनु जाह ॥
तखन जर हरि तनु समाएल, भेल शीतल लोक ।
[2]शीरपाणि, [3]रतीश, विनतातनय[4] भेल अशोक ॥
इ सभ भए गेल तखन शिव बल बाण लाघल जंग ।
कतए थमि सक हरिक शरहति, थमित भेल तरंग ॥३२॥

जखन बलिसुत भेल निर्जित, [5]गिरिश कौं भेल रोष ।
कएल शंकर रण-तयारी, हरिक नहि किछु दोष ॥
तखन हरि-हर जगत-दुर्द्धर, द्वन्द-युद्ध पसार ।
बुझए नहि दिन राति सङ्कर, अस्त्रजाल अँधार ॥
हरक शर भेल उरग विषधर, चलल माधव-तीर ।
तखन हरि-शर गरुड़ भए कहु हरल हर-शर-भीर ॥
गिरिशशर भए गजक आकृति, चलल गिरिधर-पास ।
तखन हरि-शर सिंह तनु भए, हरल शिव-शर-आस ॥

१—कृष्ण । २—बलराम । ३—कामदेव । ४—गरुड । ५—महादेव कें ।

गिरिश-बाण पिपीडिका भए, पड़त यदुमणि-अङ्ग ।
हरिक बाण मयूर-तनु भए, कएल हर-शर भङ्ग ॥
कहब कत हम शरक रचना, रचल शम्भु अनन्त ।
भेल हर-शर सभ निरुत्तर बूझि शिव-शर अन्त ॥
हर तमोमय समर—निर्दय, लेल आयुद्ध शूल ।
कएल हरि कर चक्र-धारण दुहु जगतक मूल ॥
ज्वाल-जाल कराल देखि सभ, आँखि लेलक झाँपि ।
त्रसल रवि विधु तारकागण, धरणि उठलिह काँपि ॥
सबहु देव विचार कए मन, कहल विधिसौं जाए ।
"बाण कारण परम विग्रह[1] कथ अनुग्रह[2] धाए ॥
एकसौं भए तीनि विग्रह[3], जानि काजक भेद ।
एकर विस्मृति, तखन की जग ? देव राखिअ वेद" ॥
अस्त्र युग नहि मोघ[4] एकहुक, बूझि कञ्जज[5] आए ।
तखन कए विधि उचित गोचर, रहस बैसल जाए ॥
थिकहुँ एक अनेक विग्रह[6], तीनि तरहक काज ।
करिअ ध्यान विधान मानस, तखन उपगत लाज ॥
हरिहरस्तुति सुनि शंकर तेजि आयुध—जाल ।
कहब किछु हम सुनिअ माधव बाण जानब बाल ॥
फेरि हरिसौं कहल शंकर बाण दुइ भुज राखि ।
हमर वरतहु असुर-रक्षण भेल देखब आँखि ॥
जखन शंकर दूर उपगत कञ्जभू[7] निज गेह ।
शूल चक्र समेटि राखल हर्षलोक विदेह ॥३३॥
तखन हरि फेरि रङ्ग उपगत हुलसि बलिसुत देखि ।
कएल युद्ध समग्र क्षण क्षण शम्भु-दम्भ विशेषि ॥
हरिक मन अति क्रोध उपजल सिरजि अस्त्रक जाल ।
जाए छारल बलिक सुत-बल भेल बाण बेहाल ॥

१—युद्ध । २—कृपा । ३—देह । ४—व्यर्थ । ५—ब्रह्मा । ६—देह ।
७—ब्रह्मा ।

भेल अन्तरहीत[८] बलिसुत कएल मायिक युद्ध ।
ओतहु हरि-शर जाए छारल सकल तनु अवरुद्ध ।।
तखन बलिसुत भेल व्याकुल कोपमय रण आए ।
करए लागल रङ्ग कतिविध चित्त शम्भु सहाय ।।
तखन हरि अति कोपमय भए चक्र धएलन्हि हाथ ।
देखि बलिसुत भेल हरखट कहल गिरिजा-नाथ ।।
"तोहि तेजि नहि शरण दोसर भेल अओसर[९] फेरि ।
करिअ भक्त-सहायता हर उचित ताहि न देरि" ।।
"सुनह बलिसुत करब हम नहि आब हरि सौं रङ्ग ।
हमहि हरि तनु दुइ जानह, काट के निज अङ्ग ?।।
हमर आब सहायता नहि जाह निज बल पाए ।
अपन दोष विचारि देखह करब की हम जाए" ।।
तखन बलिसुत जाखि पहुँचल रङ्गभूमि समीप ।
देखि हरि-दुति तेहन भए गेल भानु तट जनि दीप ।।
बाण-प्राण विचारि माधव चक्र देलन्हि राखि ।
शङ्ख-धुनि कए चक्र लेलन्हि कोप-पूरित आँखि ।।
बाण दिसि हरि हेरि भाखल "कतए तुअ बल गेल ।
करिअ सफल निज मनोरथ तकर अवसर भेल" ।।
सुनल बलिसुत हरिक भाखल तखन उपजल रोष ।
फेरि हरिसौं रङ्ग लागल अस्त्र गहि भरि पोष ।।
द्वन्द सङ्कर होमए लागल चकित लखि सभ लोक ।
कहए लागल किछु भावी करए लागल शोक ।।
तखन कर गहि चाप शर-भर कएल यदुमणि रङ्ग ।
हारक तर बलि-बाल जाँखथि देखि निज बल भङ्ग ।।
तेहन बाणक तरह देखिकहु भेल षण्मुख[१०] क्रुद्ध ।
धाए आए सहाय बाणक करए लागल युद्ध ।।३४।।

८—अदृश्य । ९—अवसर ।
१०—कार्त्तिकेय ।

प्रथम अबितहिं रणक आरम्भ युद्ध वाहन द्वन्द[२] ।
तुण्ड-पक्ष नखायुधाकुल भेल शिखि अति मन्द ।।
[३]तेहन देखि विशेषि हरसुत लेल आयुधपुञ्ज ।
गरुड़ ऊपर कतेक फेकल करए चाहथि लुञ्ज[४] ।।
तेहन यदुपति तरह देखल बहुत मन भेल कोप ।
"[५]तारकारि-मयूर आकुल भेल के कर गोप ।।
जखन हर-सुत बड़ बेआकुल अपन देखल हारि ।
शक्ति कर गहि गर्जा कएलन्हि अस्त्र देलन्हि टारि ।।
तखन काल कराल-सम कर चक्र लेल मुरारि ।
भेल सभ दिश परम क्षोभित सकल लोक विचारि ।।
कहल यदुमणि "सुनह षण्मुख करह निज परकार ।
काटि तुअ कर शक्ति काटब तोहि चक्र क धार" ।।
तेहन अवसर बूझि भगवति तेजि अम्बर[६] आए ।
कृष्ण सम्मुख ठाढ़ि भेलिहु लाज देल बहाए ।।
"कृष्ण कृष्ण दयामयाशय हमर राखिअ तोष ।
करिअ बाल गोहारि माधव छमिअ जत सुत दोष" ।।
तेहन तनु लखि झाँपि दृग हरि कएल सुत-जिब-दान ।
बाण कारण बैर सिरजथि तेहन देवि गेआन ।।
तखन निज सुत सङ्ग लए कहु देवि गेलिहु गेह ।
बाण प्राण बचाए हरिसौं समर दुइ भुज देह ।।
एहि उत्तर बाण-सेना रहल जे चतुरङ्ग ।
धाए जाए मुरारि सभ मिलि कएल सबहिक भङ्ग ।।
रहल नहि दल भेल अथबल पुरुब कर पछताब ।
हरि सुदर्शन जखन फेरब करब की हम आब ।।

२—दुहुक वाहन मे युद्ध । ३—गरुडक नहकनी अस्त्रक द्वारा व्याकुल मयूर ।
४—नीरव । ५—तारकासुरक शत्रु मयूर विकल भेल ओकर रक्षा के करत ?
६—वस्त्र ।

जतेक नृप-सुख सबहु पूरित छलहुँ की मति भेल ।
जाए शम्भु रिझाए सब विधि लवन की वर लेल ।।
तकर अवसर आए पहुँचल करत के अब त्राण ।
हरिक क्रोध निरोध के कर पड़ल संकट प्राण ।।
सकल सुनि दिमान कहलक "सुनिअ बलिसुत देव ।
आब की पछताए अओसर बितल स नृप सेव" ।।
एहि उत्तर भानु-शत-द्युति[1] हरि सुदर्शन लेल ।
बाण-भुज सभ क्षणहिं काटल दुइ भुजा तजि देल ।।
"ज क छल तोहि बाहु-कण्डुति छुटल से सभ आज ।
भावि से पुनु भेल चाहए तकर की मन लाज" ।।
एहि उत्तर बाणकाँ भेल परम तत्त्वक ज्ञान ।
जोरि करपुट कहल हरिसँ कएल मानस ध्यान ।।२६।।

देवगिरा हरि स्तौति पद्यैः :—

जय तारधराभारधारणोद्धारकारण ।
संसारसारकंसारे देवदेव नमोऽस्तु ते ।।२७।।
वृष्णिवंशावतंसाज वसुबाहो दयानिधे ।
त्रिविधाकारकृत्कार्य्यवशादेव नमोस्तु ते ।।२८।।
प्रह्लादाह्लादलीलानर्मायामोहित विश्वकृत् ।
भक्तिभव्यद भूतेश देवदेव नमोस्तु ते ।।२९।।
कर्ता हर्ता च पातापि विश्वस्य बहुरूपधृक् ।
अज्ञानतमसेनस्त्वं देवदेव नमोस्तु ते ।।३०।।
अबोचमभ्यर्थयेन वरदानविधावहम् ।
त्वन्माया कारणन्तत्र देवदेव नमोस्तु ते ।।३१।।
कुम्भकर्णः कृततपो वरदाने विधेः पुरः ।
अबोचदन्यदेवद्बुद्ध्या देवदेव नमोस्तु ते ।।३२।।
ममैव दोषः सर्वोऽयं कृतो रङ्गस्त्वया समम् ।
मायावशस्य नो मन्यो देवदेव नमोऽस्तु ते ।।३३।।

कथं सन्तुष्टतामेमि रुष्टतामपि माधव ! ।
को वेद चरितं कोऽपि देवदेव नमोस्तु ते ।।३४।।

अथैनं स्तुत्वाह "हे कृष्ण धिक् ! जीवनान्मरणमेव वरं तथैव विधेयम् । नो चेत्क्षतादिशममर्थ्येषा तथा कुरु । कावस्था मम पूर्वं, कीदृश्यधुनेति विमृश्य बहुव्याकोच एव मनसि । अतः परं किं राज्याधिकम् । भवत्प्रीतये सर्वं मया तुभ्यमदायि मत्पित्रा वामनाय यथादायि तथैव । किञ्च मद्दुहितुर्भवन्नप्त्रा पाणिपीडनमित्यपि महद्भाग्यम् । तत्कुलमजानता मया तेन युद्धमकारि तत्फलमेवैतदभूत् । मम दोषमगणयन्नबन्धो कृपासिन्धो दयां कुर्विति मामकी भूयसी प्रार्थनेति किं बहुना" ।

अथ बाणासुरस्तुत्यादि निशम्याबन्धुबन्धुः कृपासिन्धुः श्रीकृष्ण उत्तरमाह प्रथमं पद्येन । यथा—

काले जायत एव जन्तुरखिलः कालोऽवति प्रायशः,
कालो नाशकरो हि कालवशगो दृष्टञ्च कालात्मकम् ।
कालः क्रीडति काल एव रुदति (?) श्रेयस्स सर्व श्रयः,
कोऽहं तत्पुरतोऽसुराधिप भवे दुर्भामता मामकी ।।३५।।

यथा—

श्वो राज्यं रामचन्द्रस्य भविता सर्वसम्मतम् ।
स गतस्सीतया सार्धं कान्तारे तन्निदर्शनम् ।।३६।।
पाण्डवानामहम्मित्रं चित्रं भूरि पराभवः ।
द्रौपदी च सदोनम्रा तत्रैव सुनिदर्शनम् ।।३७।।
एवमादिदृशा पश्य काल एवात्र कारणम् ।
निमित्तमात्रमेवाऽहं तथापि निगदाम्यहम् ।।३८।।
भवितव्यं भवत्येव नाभव्यं भवति क्वचित् ।
नार्हसि त्वं शोचितुमनिवार्य्येऽसुराधिप ।।३९।।
यदि भक्तः पुरारेस्त्वं ह्यपरोऽत्र न कोऽपि मे ।
आवयोर्न्नं च भेदोऽस्ति किमावरणतो भवेत् ।।४०।।

१—सूर्यक सए गुणा प्रकाशित सुदर्शनचक्र ।

विसृज्य सर्व्वं राज्यादि गच्छ त्वं शिवसन्निधौ ।
तत्र नृत्यादिकरणे वाञ्छासिद्धिर्भविष्यति ॥४१॥
अद्यापि राज्यं चेन्मह्यं गृह्णामि प्रीतये तव ।
ददामि चाहं कस्मैचित्पशुरामो यथा ददौ ॥४२॥
उषानिरुद्धयोः कृत्वा दृष्ट्वा जम्बूलमालिकाम् ।
गच्छामि द्वारकां वृत्तं विदितन्तेऽस्तु यत्विदम् ॥४३॥

इति श्रीरत्नपाणिशर्म्मविरचितायामुषाहरणनाटिकायां युद्धपर्य्यन्तमाद्य-प्रकरणं समाप्तम् ।

★ ★

अथ बाणासुरः सप्ताङ्गं सकलराज्यं मित्रकलत्रविचित्रचित्रितसौधादि-सौख्य पुरीञ्च त्यक्त्वा शिवान्तिकं गन्तुमुत्सुकोऽभवत् ।

अथ भुजक्षतव्याकुलमनाः सर्व्वविराग आशुतोषं हृतदोषं शंकरमभि-लक्षीकृत्य बाणासुरो वदति । अत्र दोहा :—

क्षतक व्यथा अति विकल मन, विकट स्वरूप निहारि ।
अब की जाएब सौध[1] बिच, की हम देखब नारि ॥४२॥
शिव - पद सेवल जन्म भरि, तसु फल सभ सुख भेल ।
चरक समय मन विषिक वश, कौदहु मति भए गेल ॥४३॥
अपन अवस्था देखि सभ, बाणासुर तजि देल ।
क्षणभङ्गुर तनु देखि मन, हर - दर्शन - मति भेल ॥४४॥
जग भरि अशरण - शरण शिव, फेरि जाएब सुत पास ।
करब अराधन तखन हर, पुरब दासक आस ॥४५॥

अथः परं कैलाशे शिवसन्निधिङ्गत्वा यथोक्तरूपं शिवं पश्यन् स्तौति पद्यैः—

भुजङ्गवरमेखलं, स्फटिकजालशुभ्रच्छविं
शुचीन्दुहुतभुग्दृशं जटिलमिन्दुचूडं प्रभुम् ।

1—कोठा ।

त्रिशूलिनमजं विभुं प्रणवरूपमुल्लासिनं
दिगम्बरमहं भजे कमपि कामदं तत्पदम् ॥४४॥
यदीयसुदृशःकृपा यदि हि जातु वा जायतेऽ
धनोऽपि धनदायते विरचिरीशकामायते ।
अवागपि बुधायते विगतदृक्कशाक्षायतेऽ-
चलोऽपि लघुगायते तमिह विश्ववन्द्यं स्तुवे ॥४५॥
सुरी न भवतः परो जगति कोऽपि भूतेश भो
निरङ्कुश इहानुभाविषय एव कृत्यादिभिः ।
सदैव निजकर्म्मणो यदि हि भोक्ष्य एवं फलं
किमत्र गरिमा तव प्रणतभव्यदोहं शिशुः ॥४६॥
अचिन्ति मनसा सुरस्त्वदितरो न शक्तिर्मया
कदापि शिशुनाधुना विपदि यामि यस्यान्तिकम् ।
भवत्प्रतिपरस्य चे क्वपि दोषदृष्टिः कदा
किमस्य भविता विभो तदिति नैव जाने गतिः ॥४७॥
सरस्य सुरभिव्रजः सपदि संपदः सन्तु वा
नतादरगता अपि प्रमथनाथ नेहेतराम् ।
परन्तु भवतोऽनिशं कुशलधाम नाम स्तुतं
व्रजन्तु दिवसानि मे जपत एव सायुज्यदम् ॥४८॥
विहाय किल कापथं व्रजतु सत्पथं मे मनो
मनोजनिकषालये विधातु मायुसम्वर्द्धने ।
नमद्भयनिवारणे सकलकारणे कारणे
भवत्पदयुगे सदा वसतु नाथ नाथाम्यहम् ॥४९॥
यदीयचरणाम्बुजं मनसि चिन्त्य वेधा जगत्
सजत्यवति कञ्जजो यजनयाचको माधवः ।
कथं न भजसे मनो निखिलकामदं दुर्म्मते
भवेयमहमप्यवस्तदिदमर्थयन्नादिशाक् ॥५०॥
विधेहि विपदम्बुधौ शरणमुग्रमग्ने शिवा-
वनन्यगतिके दया भवनदुष्टकर्म्मोद्भवे ।

भवन्तमनुचिन्त्य यज्जगति लब्धकामा न के
विचित्रचरितं जनाः स्वपदि भूरिभक्तालयाः ॥५१॥
हराशु हर मे व्यथां स्वकृतदोषजामद्भुता-
मजाजिनसदासन प्रमथनाथ वेदस्तुते ।
विपत्तिचयसागरे पतत इन्दुभाल प्रभो
कुरुष्व करुणामये विलपतो निजां दृष्टिकाम् ॥५२॥

इति बाणासुरकृतं शिवस्तोत्रम् । अतः परं बाणासुरः पारिभाषिक-
महेशवाण्या भाषया करुणाकरं शंकरं प्रार्थयति :—

(महेशवाणी)

शिव मोर करिअ त्रणे ।
अपह व्यथा हम सहए न पारिअ संकट पड़ल पराने ॥
नाचि काछि शिव तोहि रिझाओल आब होएत वरदाने ।
तखन भेलहुँ मायावश अभिमत याचल आनक आने ॥
तकर उचित फल आए तुलाएल जेहन कएल अभिमाने ॥
दश शत बाहु क्षणहिँ काटल गेल नहि दोषी खगयाने[1] ।
सभ तेजि धाए आए तुअ परिसर धए मन आस विधाने ।
देखिअ नाच हरषि हर हेरिअ हरिअ दोष - सन्ताने ॥
देखि नाच हर सभ दुख फेरल कएल गणक परधाने ।
रत्नपाणि भन वरद एक शिव जगत-विदित-यश-गाने ॥३६॥

अपरञ्च गीतम् । छादोश्तरम् :—
प्राण कारण विकल बलिसुत गेल शंकर - तीर ।
छलहुँ के हम भेलहुँ की अब कहए नहि रह धीर ॥
तखन बलिसुत कएल गोचर जोड़ि कर - पुट माथ ।
विकल भए तुअ पास अएलहुँ सदय हेरिअ नाथ ॥
देखि गोचर तखन शंकर देल अभिमत दान ।
छूटि सभ दुख भेल अति सुख कए देव समान ॥

१ – कृष्ण ।

तेजि राज समाज सुत वित भेल शम्भुक दास ।
देखि शुभ-मति प्रमथ-गण वर शम्भु पूरल आस ॥
रत्नपाणि विचारि मन भन असत जग अभिमान ।
बाण भूपति तन्हिक दुर्गति एहन भेल निदान ॥३७॥

इति बाणासुर वरदानम् ।

अथातः परं बाणासुरपराजयं समीक्ष्यान्तरिक्षादागत्य कलिविशारदो नारदो जयाशीर्भिरभिवृध्य वृष्णिवंशावतंसं कंसघ्नकं सपरिवारं श्रीकृष्णं प्रत्युज्जगाद वचनेन :—

कृष्ण त्वं धन्य धन्यस्त्वमसि हि जगतां त्वत्समः कोऽपि नान्यः
कर्त्ता हर्त्ता च भर्त्ता कलितबहुतनुः कार्यतो वीर्यवर्यः ।
आशीर्वादो मदीयो नुतमुररिपयात्क्षम्य एषोऽपराधो
बाणस्याखण्डदण्डप्रबलभुजलयाद् गीतकीर्त्तेर्ऽद्भुतोऽसि ॥५३॥
एक एवास्यनर्थस्त्वं वैनतेयसहायवान् ।
किं पुनर्बलभद्रेण प्रद्युम्नेन विशेषतः ॥५४॥
एष बाणासुरो गर्वी जीवन्मृत्युमवाप्तवान् ।
स्तुतेन्मायां न मामन्ते विज्ञप्तिरिति भूयसी ॥५५॥

अथातः परं कृष्ण उत्तरमाह :—
किमेतं वदसि देवर्षे विरञ्चिसुतसत्तम ।
कृपा या तावकी तस्या मामकी भूतिरुत्तमा ॥५६॥
कुम्भजातेन मुनिना सिन्धुः पीतस्तपस्विना ।
विश्वामित्रेण कोपेन सृष्टिरेव कृतापरा ॥५७॥

अथ भाषया कृष्ण आह गीतम् :—
देखब कखन मदन-सुत आँखि ।
उड़ि नहि सकिअ बिना मुनि पाँखि ॥
बिनु दर्शन नहि मानस थीर ।
कतेक समारिअ लोचन नीर ॥

बुझलन्हि बाण हमहि एक शूर ।
भेलइन्हि तकर मनोरथ पूर ॥
देखिअ जाए तोरित अनिरुद्ध ।
तखन सकल सभ जानब युद्ध ॥
अनुपम देवपुरी निरमाण ।
दोसर द्वारका कएलक बाण ॥
रत्नपाणि भन मन अनुराग ।
कृष्ण सराहल बाणक भाग ॥३५॥

अथोत्तरं नारद आह । अथ दोहा ।—

जे किछु बाचल असुर जन से सभ आए तैआर ।
कहल कृष्णपद धए रहब, निश्चित सभक विचार ॥४६॥
कृष्ण सदय मन बूझि सभ, धएलक हरिपद-कञ्ज ।
भेल कृतारथ सकल जन, मेटल जत हिअ-रञ्ज ॥४७॥
तखन कहल मुनि कृष्णसौं सुनिअ देव चित लाए ।
मन वच कायिक भजत पद, सभकाँ रहिअ सहाय ॥४८॥
धर्म्म कर्म्म अति निरतमन, बाणासुरक दिमान ।
निज पद-सेवक जानि हरि, हिनक करिअ सम्मान ॥४९॥
करए चलल अनिरुद्धवध, हाथ गहल तरुआरि ।
तखन दिमान बुझाए सभ, देलन्हि तसु वध टारि ॥५०॥
बालक एक मन ज-बुलि, कतविध कएलन्हि जङ्ग ।
कुल शील सभ बूझिकहु, करब उचित रति-रङ्ग ॥५१॥
एहन चरित तस बूझि मन, उपजल अति सन्तोष ।
मुनि-सम्मत तसु राज्य दए, कएल बहुत परितोष ॥५२॥
कर-पुट सम्पुट जोड़िकहु, गोचर कएल दिमान ।
भेलहुँ कृतारथ पुण्यबल, पाए भूप सम्मान ॥५३॥

भाषया गीतेनामात्यः कृष्णं स्तौति :—

कृपादृष्टिसौं हेरल नाथ । न गुनल रिपुजन कएल सनाथ ॥
लङ्का जाए कएल हरिकाज । दशमुख मारि बिभीषन राज ॥
कंस हतल हसितहिँ शिशुनाज । उग्रसेन पओलन्हि पुनु राज ॥
परशुराम तनु लेल अवतार । कि कहब महिमा अगम अपार ॥
निःक्षत्रिय कए लेलन्हि राज । से पुनु आएल कश्यप काज ॥
तेहन कृष्ण मोहि आज सहाय । हरलन्हि सकल बिपति चित लाए ॥
रत्नपाणि भन जाग यश गान । भानक वध जानब भगवान ॥३६॥

दोहा ।—

सपरिवार वसुदेवसुत, सभ मिलि कएल पयान ।
पाशबद्ध अनिरुद्ध तट, उपगत श्रीभगवान ॥५४॥

छन्दोन्तरमाह तटस्थः :—

कृष्ण-समागम रति-सुत[1] बझि । हर्षक लेल पड़ए नहि सूझि ॥
कएल प्रणाम सभक मन लाए । लज्जावश किछु कहलो ने जाए ॥
जनिक सुमरि पद अनलहु त्राण । से प्रभु आए बचाओल प्राण ॥
की भेल बाण कतए गेल नाग । कृष्ण सहाय परम थिक भाग ॥
कतेक बिपति सेपल प्रह्लाद । बिष होअ अमृत जनिक परसाद ॥
मन वच कायिक हरि भज लोक । से जग पावन पाव न शोक ॥
कि कहब हेरब जग हरि आहि । कतए पराभव उपगत ताहि ॥
रत्नपाणि भन मन कए थीर । भजत तकर हाथहि यदुवीर ॥४०॥

अथानिरुद्धः सुरगिरा श्रीकृष्णं स्तौति गद्येन :—

जय जय कृष्ण वृष्णिवंशावतंस, कंसशासक, वृन्दारकवृन्दवन्दितपदद्वन्द्वा-रविन्द, गलदमन्दमकरन्दवारिधारास्वर्धुनीपावनीकृताखिललोक, शोक-हारक, भवसृष्टिस्थितिविसृष्टिकारक, भक्ततारक, ग्राहग्रस्तगजेन्द्रमोक्षदक्ष, न्यक्षसपक्षविपक्षपक्षक्षतक्षारसमक्षलक्ष क्षणदाधोक्षज, पुण्डरीकाक्ष, नूतनस-घनघनकान्त, धराभारश्रान्त, रमाकान्त, दान्तवेदान्त, विदितानन्त दूरीकृताज्ञान, ध्वान्तानन्तसन्तानवितान, खगेन्द्रयान, खण्डीकृतकलित-

1—अनिरुद्ध ।

कोदण्डबाणभुजदण्ड, सुरमण्डन, चित्रचरित्र, शम्भुमित्र मित्रवह्निविधुलोचन, दुःखमोचन, जितविरोचन, भक्तशोचन देवदेव, देवकीवसुदेवसुत, भूदेव, दारिद्र्यविद्रावण शमितरावण, सगुणनिर्गुणरूपधारण, नागपाशावरुद्धानिरुद्धबन्धविध्वंसकाम्धमायान्धकारापहारक नमस्ते नमस्ते नमस्ते"।

इत्यनिरुद्धकृतं स्तोत्रंनिशम्य नारदमुवाच श्रीकृष्णः :-" किम्विधेयमधुना मुने।" मुनिराह—"देव सखीवृन्दवेष्टितामुषां समाहूयानिरुद्धेन पाणिपीडनसंपादनं विधेयम्"। तथैवोषा समागत्य श्रीकृष्णं स्तौति भाषया :—

की हम कहब कतेक मोर ज्ञान । अबला अलप वयस की जान ॥
युग युग योगि धरथि कत ध्यान । दरशन सपथ करथि अनुमान ॥
पुण्य पुराकृत[1] उपगत भेल । परम पुरुष मोहि दरशन देल ॥
भेलहुँ कृतारथ सब विधि आज । [2]जगत जनक तह् किकरब लाज ॥
कि कहब महिमा अगम अपार । जनिक ज्योति थिक जगत पसार ॥
रत्नपाणि भन मन अवधारि । अनुखन तन मन भजिअ मुरारि ॥४१॥

अथैतस्मिन्नेव समये बाणासुरान्तःपुरे चारद्वारा "श्रीकृष्णेन बाणासुरस्य भुजद्वयोनसहस्रभुजदण्डखण्डनं सकलबलशमनञ्चाकारि, तदुत्तरं राज्यादि सर्व्वमुत्सृज्य बाणासुरः प्राणमात्रावशेषः कृतदोष आशुतोषान्तिकमुपयायिति" निशम्याशनिपातमिवाकलय्य पट्टमहिष्यादिकास्सर्व्वाः स्त्रियः कीदृश्यःस्थितास्तदा कीदृश्योऽभवन्निति तदत्र आह पद्याभ्याम्। यथा :—

सकलागमधीरा वलितपटीरा अनुपमचीरा मणिवलयाः
निजवल्लभदोषादपगतरोषा विगलितकोपादिकनिचयः।
अवगतधवयाना निखिलनिधाना लसदभिमाना अपि सदयाः
सुषमाकविगीता अभवन्भीता जनतानीता गतविनयाः ॥५६॥
किञ्च,
असुराधिपदारा विगलितहारा, विगतविहारा, जातशुचः
सकलोदिततारा: पतिसुखसारा, लोचनधारा, हीनरुचः।

1—पुराकृत। 2—संसारक पिता सँ।

तुच्छीकृतहासा, दैवहताशा, विपदुरुपाशा सुग्यहृदः
स्यक्तीकृतवासा, विगतविलासा, बलदुच्छ्वासा, नीतिविदः ॥५७॥

ततो बाणस्य पट्टमहिष्यादिका अपि पुरजनानां स्त्रियोऽप्यशरणा वयमितिमत्वाऽशरणशरण-कृष्णानुसरणमेव विधेयम्। ततस्ता अपि सर्व्वा अगर्व्वा एव कृष्णान्तिकमागताः। समागत्य ताः श्रीकृष्णं प्रयूचुः पद्यैः :—

कृष्ण कृष्ण महाबाहो त्राहि त्राहि दयानिधे।
अनाथनाथ नाथस्त्वमनाथा वयमागताः ॥५८॥
किङ्कुर्य्य इति जानीहि पुनीहि कृपया विभो।
सर्व्वीकृतारिगर्व्वोऽसि सर्वप्राण नमोऽस्तु ते ॥५९॥
उषायाऽदोषया सार्धं पाणिपीडन-मङ्गलम्।
नप्तुर्विधेहि सविधे विधेरत्र विधानतः ॥६०॥

किञ्च, गीतं भाषया ता वदन्ति :—

[1]जखन सुनल बाणासुरभुज-भव-खण्डन कएल मुरारि।
तखन अन्धार लाग मोहि सभ दिश पति बिनु अगति विचारि ॥
तखन कएल तुअ तत्त्व-विवेचन देखल जग हरि एक।
मायावश सभ राग बेआपित कि कहब तकर विवेक ॥
ब्रह्मादिक सुर सकल विकल मन तुअ मायावश लोक।
शरनहि कृष्ण यथाबधि नत भु भ, तेहि पए छूटए शोक ॥
जनन मरण दुहु थीक नियत जग सुख दुख अनियत जानि।
करिअ कृष्ण तुअ पद-युग-सेवन की विधि लीखब चानि॥
रत्नपाणि भन सुनिअ मुदित मन तेहि पूरए जग आश।
हरि-पद-कमल विमलमति भाविअ तखन ककर जग त्रास ॥४२॥

अतः परं बाणामात्यो[2] बाणासुरमहिषीचरितं श्रीकृष्णं प्रति वदतिस्म। भाषया गीतम् :—

1— बाणासुरक पत्नीसभक उक्ति। 2—बाणक मन्त्री।

बाणासुरक थिकिह महिषी[३] तिअ असुरवंश जनि पाए ।
तखन सतत मन तुअ पद चिन्तन पुण्य पुराकृत पाए ॥
राजपाट जत तकर समीहा सभ हिनि तेजल आज ।
भेलिहि कृतारथ तुअ पद देखितहि कहलन्हि के थिक लाज ॥
कतए थमिअ हम देश दिगम्बर कतए द्वारका धाम ।
तखन आबि हरि दरशन देलन्हि पुरित भेल मनकाम ॥
अपन कर्म फल सभ जग भोगए ताहि तरहु नहि आन ।
शोणितपुर पति पाए चरित गति धएलन्हि गए शिवध्यान ॥
रत्नपाणि भन सनिअ सकल जन अनियत जीवन जानि ।
[४]निधननियत बुझ ध । जन तेजिअ भाबिअ सारङ्गपाणि[५] ॥४३॥

अथ प्रस्तावं लब्ध्वा पुनरपि श्रीकृष्णं प्रार्थयति पद्याभ्याम् :—

कृष्ण त्वं त्राहि नाथ त्रिभुवनविजयी दुष्टगर्वापहारी
बाणस्य मात्यबुद्ध्या न परिहर हरे त्वद्गतं मे सदाकृत् ।
भाग्यं बाणात्मजायाः कुजनुरथ भवभ्रत्नभार्य्या भवेद्या
हृष्टस्तुष्टः कुतो वा भवसि समगतिः को हि वक्तुं तदीश ॥६१॥
कर्त्ता हर्त्ता च गोप्ता भवसि च जगतामेक एवेति सत्यम्
प्रायः कार्यप्रभेदाज्जगति बहुतनुर्ह्यल्पोप्यभेदात् ।
देवाः सेव्या अदेवाः स्मृतिनिचयविदः के न कुर्वन्ति सर्व्वे
तेऽपि भ्रान्ता अहन्ते पदकमलयुगं नाथ नौमि प्रसीद ॥६२॥

अथातः परं कृष्णेनोक्तम् :— हे बाणासुरामात्य त्वं ममातिभक्तोसि मया-
बोधि" । ततः कृष्ण आह नारदं प्रति:—"हे मुने अतः परं कन्यादानकर्त्ता
को भविष्यतीति" निशम्य मुनिराह-"हे कृष्ण ! बाणासुरामात्य एव तदङ्ग-
त्वात्तत्पट्टमहिषीसमन्वितश्च" । "अत्र कः पुरोधाः" । उत्तरं, "चिर-
ञ्जीवरेव स्मरणीयः" । कृते स्मरणे समाजगाम सः । अत्र विवाहोद्योगे
सति अप्सरोगणास्समागत्य ननृतुः गन्धर्वाश्च जगुः । आदौ विघ्ननिवा-
रकत्वाद्विनायकस्य मङ्गलश्लोकः । यथा—

३—पटरानी स्त्री । ४—मरण निश्चित । ५—कृष्ण ।

[१]जय शुभदायक वरद विनायक सुरवर-नायक वेदनुते
जय हर-बालक नतजन-पालक मणिमय-भाल-कलाधिपते ।
जय भय-भञ्जन सरमुनि-रञ्जन रिपुचय-गञ्जन मञ्जुमते
जय भव कारक दनुज-विदारक निज-जन-तारक विश्वपते ॥६३॥

अथ दुर्गतिनाशकत्वाद् दुर्गागीतं भाषया :—

करु करु मङ्गल देवि भवानी । तुअ पर-परश गिरिश[२] वरदानी ॥
तोह धनि जननि एक सभ जाने । पुरत मनोरथ के पुनु आने ॥
संकट विकट मेटए तुअ नामे । विबुध सेबि तोहि पुरित कामे ॥
दशविध रूप सेहो परिनामे । दुर्गति—नाशिनि दुर्गा नामे ॥
तुअ महिमा जग के कहु देवा । पुरित मनोरथ तुअ पदसेवा ॥
रत्नपाणि भन मन अवधारी । दहिन रहिअ गिरि-राज-कुमारी ॥४४॥

अतः परं वराकरणसमये कलशमेकमव्याममव्रणमम्बुपूरितं पल्लवाच्छन्नमुखं काचित्स्त्री शिरसि निधाय गायनीभिर्बहुवनिताभिस्सह शकुनं कर्त्तुं वरपार्श्वमागच्छति स्म । वर उत्थाय सति सम्भवे तद्घटमध्ये पूगफलादि रजतादि द्रव्यञ्च प्रक्षिपतिस्म । अत्र वरचलनमारभ्य कन्यादानादि-पर्य्यन्तस्य गीतमेकं भाषया, तस्य "पड़िछनो" ति नामावधेयम् ।—

कलस एक जल--पूरित रे, लए चलु धए आगे ।
गाइनि बहुत चलए सङ्ग रे, पहुँचए वर पासे ॥
वरक पान लए शिरसौ रे, दोपटा गड़ लाई ।
चलए सबहु शुभ शुभ कए रे, गाबए शुभदायी ॥
चौदिश मण्डप घूमिअ रे, वर आब सुठामे ।
पहिरथि नव पट पीअर रे पुलकित मन कामे ॥
कएल अठोङ्गर बीधि रे, मण्डप बिच जाई ।
अरतिह भए वर आए रे, कन्यागृह धाई ॥
कन्या सहित चलए वर रे, सुनइत शुभ गीते ।
नभ दिश मङ्गलचार रे, कि कहब तसु धीते ॥

१—विवाहक आरम्भमे गणेशक वन्दना । २— महादेव ।

कन्यादान लेल वर रे, शुभ वेद विधाने ।
तखन होम विधि बोधित रे, अनतए परधाने ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि रे, आशिष शुभकारी ।
दुलहि दुलह भेल समुचित रे, जीवथु युग चारी ॥४४॥

अपरञ्च । पड़िक्षनीति नामकं ध्रुवम् :—

निरखि वर सभ गुणक आगर, पुरल सबहिक आस रे ।
जनिक रूप अनूप सब कह, चन्द्रमय जनु हार रे ॥
धन्य से विधि जनिक सिरजल, अवधि रुचि परगास रे ।
हृदय मणिमय हार शोभित, कान कुण्डल भास रे ॥
वचन मधुमय सदय मानस, नयन कञ्ज विकास रे ।
मदन तन अनुरूप राजित, शील सिन्धु विलास रे ॥
कंसशासन—वंश अवतरु, तहन रूप तरास रे ।
सकल नीति विचार कोविद, लेल सुरतरु बास रे ॥
जनिक दरशन तहन मन होअ, बितए युग सह बास रे ।
दुलहि समुचित जखन सब गुण दुलह मन तसु बास रे ॥
रत्नपाणिक प्रेम दिन दिन, बाढ़ हो न हरास रे ॥४६॥

अथ जाते विवाहे श्रीकृष्णो नारदमाह ।—"मुने अतः परं द्वारकागमनमुचित-मिति मन्मानसे प्रतिभाति, परन्तु भवताप्येषा विचारः" । ततो मुनिराह पद्येन :—

सिद्धो मनोरथो मेऽद्य सिद्धस्तेऽखिलसाहसः ।
चतुर्थीकर्म सम्पाद्य गन्तव्यं द्वारकां प्रति ॥६४॥
बाणस्त्रीप्रभृतीनाञ्च गीतानि विविधानि च ।
श्रोतव्यानि महाबाहो सर्वमोदकराणि च ॥६५॥

इति नारदवचः श्रुत्वा कृष्णोऽप्याह तथास्त्विति । ततो बाणस्य महिषी महा-हर्षमुपागता । अथावसरवशाद् बाणासुरमहिषी पुनः श्रीकृष्णं प्रार्थयति पद्येन ।—

का माता जनकः सुतादिरपि किं राज्यं धनं वा सुखम्
कल्पान्ते च सहायता मुररिपो कस्यापि नो जायते ।
मोक्षः करतव दर्शनादृत इह त्वत्पादकञ्जार्च्चना
ध्याने मूर्त्तिरियं यदा हि पुरतः सैवेह मुक्तिस्सती ॥६६॥
किञ्च,

द्रष्टुं त्वच्चरणारविन्दयुगलं कुर्व्वन्ति भूयस्तपो
ब्रह्माद्या मुनयोऽपि ये बहुयुगे पश्यन्ति तेऽपि क्वचित् ।
भाग्याल्लोचनगोचरो यदुमणे तद्भागधेयोदितं
विज्ञप्तिं कलये नुआमि चरणे पश्यामि तेऽहर्न्निशम् ॥६७॥

अथैवं बाणासुरमहिषीप्रार्थनान्निशम्य दयासागरो यदुनागरो मुरारिराह—

त्वं भक्तासि च मे देवि विभक्ता न मदाशयात् ।
भविष्यति मदीया ते नेत्रगा मूर्त्तिरुत्तमे ॥६८॥
बाणासुरस्य भार्य्या त्वं यदि राज्यान्निरन्वया ।
तदा बासस्य ते देवि समीहैव नियामिका ॥६९॥

अथेदन्निशम्य निवृत्ततर्षातिहर्षाऽमयाशया बाणमहिषी श्रीवासुदेवं आह गीतेन भाषया ।—

भेलहुँ कृतारथ तुअ पद देखि । सत्य विवेचन भेल विशेखि ॥
गोचर हमर सुनिअ ब्रजराज । एहन विचार होइछ मन आज ॥
तुअ पद-युगल-कमल बिच वास । करए हृदय तेहि पूरए आश ॥
आब न भाव असुरजन-धाम । तुअ पुर जाए पुरत सभ काम ॥
रत्नपाणि भन मनक विचार । हरि दरशन फेरि कतए विकार ॥४७॥

इति गङ्गौलीसं० श्रीरत्नपाणिशर्म्मविरचितायामुषाहरणनाटिकायां बाण-महिषीवरदानपर्य्यन्तं द्वितीयं प्रकरणम् ।

★

(३)

अथ मूर्छनाग्रामादिरञ्जनमस्वरयाञ्जतै गीतैर्नृत्यं विविधै र्वाद्यैर्महोत्सवं द्विनचु- ष्टयमतीत्यानिरुद्धचतुर्थीकर्म्मणि संपन्ने श्रीकृष्णो नारदं प्रत्युज्जगाद "मुनेऽद्य गणकपरिशोधिते समये द्वारकां प्रति मङ्गलयात्रा विधेया, यथाज्ञा भवतो भवेदिति"। उत्तरमाह किञ्चिद्विहस्य नारदः—"हे वृष्णिवंशाव- तंस श्रीकृष्ण किमत्र गणकपरिशोधनम्, तवाज्ञैव सकलमङ्गलकारिणी। भवतु नामोद्योगः सम्प्रति साम्प्रतम् तत्"। इति निशम्य तत्रत्याः सर्व्व एव जनाः कृष्णादेशधना मोदमानाः परस्परमुद्योगञ्चक्रुः। पद्येन आह तटस्थः—

छिविकाश्च समायाता नानाकारा मनोहराः।
अन्यान्यपि च यानानि विविधानि समाययुः ॥७०॥
मत्तमातङ्गयुथा हि पर्व्वता इव पर्वताः।
कम्पयन्तो धराधारं गर्जन्त इव वारिदाः ॥७१॥
अश्वा भृत्यादिवलिता नानादेश—समुद्भवाः।
धारागतिविदस्सर्व्वे गमने तु मनोजवाः ॥७२॥
अन्यत्रशस्त्रधरास्सर्व्वे पटवो हि भटादयः।
असुरा मनुजाकाराः कृष्णाङ्घ्रिकमलानुगाः ॥७३॥
वदन्तो द्वारकां सर्व्वे कदा द्रक्ष्यामहे वयम्।
यन्योषा बाणपुत्रीयं यत्प्रसादेन सत्वरम् ॥७४॥
कृष्णानुचरणन्तोऽभूत्मोक्षोऽनिरुद्धायते यतः।
येषां कृष्णे वैरिभावः किमभाग्यमतः परम् ॥७५॥
यानारोहणस्याथ समये समुपागता।
अप्सराश्चित्रलेखा या कृष्णं स्तौति नृणां गिरा ॥७६॥

अथ गीतं भाषया :—
[1]अशरण शरण कृष्ण तुअ चरण। से बुझि हमहु धएल अनुसरण ॥
ब्रह्मादिक सेवथि निश दीन। अनितर भक्ति सपन जनु लीन ॥

१—चित्रलेखाक उक्ति।

सुनिअ निवेदन मन दए नाथ। कहब उचित सभ करब न लाथ ॥
ऊषा सखी हमर अति प्राण। सपन विकल कहु कोन गति त्राण ॥
तखन गेलहुँ हम सिन्धुक तीर। देखि नारद मानस भेल थीर ॥
तामसि विद्या देल मुनि मोहि। तखन हरल तुअ नप्ता जोहि ॥
एह एक सङ्कर कारण भेल। बाण द्विभुज भए शिव-तट गेल ॥
तकरी हेतु उषा वरदान। तसु फल भए गेल एतेक निदान ॥
देवक चरित जगत के जान। एक तुअ विदित थिकहुँ भगवान ॥
दीनबन्धु न करिअ मन रोष। अहिँक कएल सभ की मोर दोष ॥
करुणावरुणालय तुअ नाम। के जग आन पुरत मन—काम ॥
जाएब हमहु दोआरका देश। तकर कृपा कए करिअ निदेश ॥
रत्नपाणि भन मन गुनि आज। पुरब मनोरथ श्रीव्रजराज ॥५४॥

अथैतदुत्तरं कृष्ण आह। अत्र दोहा :—

जकर जहन कृत तहन से, जग पावए फल लोक।
ताहि हमर की शक्य धनि, कि करह मानस शोक ॥५५॥
करह विमल मन अप्सरा, तखन चलह मोहि सङ्ग।
जे भेल से भैल समय-वश, की अब तसु अनुषङ्ग ॥५६॥
युग युग जे सुर असुर जन, कएलन्हि मोहि सह गर्व्व।
तकर ककर नहि कएल हम, कए तनु धए बल खर्व्व ॥५७॥
बाणासुर हर वरद लहि, हुनि बान्हल अनिरुद्ध।
तकर कोप हम प्रकट कए, कएल हुनक सभ युद्ध ॥५८॥
चलओ रहओ सभ अपन रुचि, मोहि कहि शत्रुक भाव।
देल राज्य हम सुमन भए, देखि दिमान स्वभाव ॥५९॥
रतिपति-सुत-तिअ हुकुम लहि, चलहु उचित सम्मान।
कएल क्षमा तुअ दोष सभ, चेतस न कर मलान ॥६०॥

इति कृष्णोक्तं निशम्य श्रीकृष्णं प्रणम्य समोदा श्रीमदुषान्तिकं जगाम। अथैतत्समय एव कुम्भाण्डदुहिता लब्धकामा रामा श्रीमदुषासहचरी समागत्य श्रीकृष्णं स्तौति गीतेन भाषया :—

कि कहब हम कृष्णक परभेद। के बुझ आन वेद नहि वेद ॥
पहिलहि धएल मीन-अवतार। तखन कएल वेदक उद्धार ॥
कच्छप तनु हरि जहिखन भेल। पीठ उपर धरणी धए देल ॥
शूकर-रूप जखन हरि भेल। धरणी रद[1] पर तिल सम लेल ॥
नरहरि-तनु भए देव मुरारि। हिरण्यक शिपु तनु देल बिदारि ॥
वामन रूप धएल हरि जखन। बलिहि पठाओल फणिगृह तखन ॥
परशुराम-तनु हरि धए लेल। निःक्षत्री पृथिवी कए देल ॥
दशरथ-सुत सीतापति राम। दशमुख-निधन विदित भेल नाम ॥
जखन कृष्ण बलभद्रक रूप। यमुनाकर्षण कएल अनूप ॥
जखन धएल हरि बुद्ध शरीर। दयामयाशय अनुदित गीर ॥
जखन भेल हरि कल्किक देह। नहि राखल जग म्लेच्छक रेह ॥
दशविध तनु कएलन्हि कत काज। तखन भेल छवि श्री व्रजराज ॥
शिशुक अवस्था कत हम कहब। देव चरित सभ सुनितहिँ हरब ॥
कि कहब महिमा अगम अपार। कृष्ण-रूप ब्रह्मक अवतार ॥
करुणाकर करुणा किछु करिअ। अबला बूझि दोष सभ हरिअ ॥
सतत रहए मोहि तुअ पद ध्यान। से वर दोअ सदय भगवान ॥४६॥

इति रामाया गीतस्तुतिन्निशम्य श्रीकृष्ण उत्तरं जगाद। तत्र दोहा :—

रामा तुअ मन भक्ति लखि, भेल मोहि परितोष।
तुअ याचित वर देल हम कएल क्षमा सभ दोष ॥६१॥
शवरी जातिक नीच अति, की तसु सदसद्ज्ञान।
गेलि परमपद भक्ति तह, मोहि नहि जाति विगान ॥६२॥
असुरवंश जनि पाए कहु, भक्त विभीषण भेल।
लङ्कापति चिरजीवित, मुक्त जनक सुख देल ॥६३॥
[2]अभिष भाव मोहि जे भजत हमहु भजिअ पुनु ताहि।
हमर सुदर्शन भक्त-जन, रक्षा करए सराहि ॥६४॥
ममता वश भेल जगत भरि, के कर भक्तिक योग।
करए चेत नहि जाए कहु, ककर करब गए भोग ॥६५॥

१—दाँत पर। २—निश्चल।

अथ श्रीकृष्णोक्तिन्निशम्य संसारं मुच्छीकृतवती तत्त्वज्ञानवती रामा द्वारकां विना नान्यत्र स्थास्यामीति मनसि निधाय सोपान्तिकमुपजगाम। ततो नारदस्समागत्य आह "हे कृष्ण को वा विलम्बः मङ्गलयात्रासमयोऽयमतीव सुन्दरः।" कृष्णोऽप्याह "मुने भवदुक्तं युक्तं प्रतिभाति तर्हि बाणपुत्री दीर्घसूत्रिणी मा भवतु। परन्तु विघ्ननिवारकत्वात् गणेशस्तवपाठं दुर्गतिनाशकत्वाद् दुर्गाकवचञ्च पठित्वा धिषिकामारुह्याग्रे व्रजतु। तदनुगास्तन्मात्रादयस्तत्सहचर्यादयश्च गच्छन्तु।। ततो गत्वा मुनिरुषां प्रति जगादेदं वृत्तं, श्रुत्वेदं वृत्तं सा श्रीगणेशस्तवस्वरूपगीतपाठारम्भमुच्चकार। पाठो यथा :—

जय करि-वदन मदन-रिपु-बालक नत-पालक सुरबन्धो
रवि-शशि-दहन-नयन शशि-शेखर सन्तत-करुणा-सिन्धो।
मणिगण-जटित-मुकुट-कुण्डल-युग-मण्डितमेकरदन्तम्
अङ्कुश कल्पलता-रद-पाशधरं प्रणमामि हसन्तम् ॥७७॥
बीजपूर-पूरित-तुण्डस्थल शुण्डा-दण्ड-जितारे
अरुण-तरुण-सिन्दूर-विभूषित यज्ञ-गुणोदित-हारे।
जय वृष-ध्वज विदित-चतुर्भुज हार-वलित मतिहीनम्
मामनुगतमव भवभयहारक शंकर तारक दीनम् ॥७८॥
मुनिमुखमुदितागमनोहर लम्बोदर वर-गीते
निगमनिकरपञ्जरशुकमोदक वलिनिरताशयनीते।
विघ्न-तमस-तरण मुनि-मानस-मानस-सरो-मराले
मम मतिरस्तु परं महति त्वयि सन्ततमयि युगपाले ॥७९॥
सुरगण-मौलि-जाल-किरण-महमपि तव पदपङ्कजमीडे
त्राहि चपलमिह मामनुगतमभि काल-भुजग-मुखनीडे।
रत्नपाणि-कलितं वसुपदमिह पठति समर्चनकाले
स्तवमनुयाति स यो गणपति-पदमुन्नतभक्तिविशाले ॥८०॥

ततो दुर्गाकवचं पठति स्म :—

शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥८१॥

प्राच्यां रक्ष प्रतीच्याञ्च चण्डिके रक्ष दक्षिणे ।
भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यान्तथेश्वरि ॥८२॥
सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते ।
यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥८३॥
खड्गशूलगदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लवसङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्व्वतः ॥८४॥

ततः पुरोहितादिभिर्दूर्व्वाक्षतं ओं आब्रह्मन्निति मन्त्रेणादायि । गुरुयोषिद्भिर्ज्जनितनीराजना श्रीमदुषा शिबिकामारुरोह । मङ्गलध्वनौ प्रवर्त्तमाने गीतनृत्यवाद्युत्सवे च वन्दिप्रभृतिकर्तृकस्तुतिपाठेषु,

"शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णञ्चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्व्वविघ्नोपशान्तये ॥
लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराभवः ।
येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥"

इत्यादि शकुनमन्त्रादिकं पठत्सु ब्राह्मणेषु पुरतो विविधवाद्यकारावयो जग्मुस्तदनु श्रीबाणात्मजा चलिता । तत्पश्चाद्रथेनारूढाः श्रीकृष्णबलभद्रप्रद्युम्नानिरुद्धाः प्रयाताः । ततो बाणामात्यो लब्धराज्यः सपरिवारो जगाम । ततस्तत्पुर्य्यां कीदृगभवदित्याह भाषागीतेन तद्यथाः—

कयो नहि रहल नगर भेल शून । सुमरि सुमरि सभ कृष्णक गून ॥
सुत वित गृह कोन आओत काज । चलिअ द्वारका कि करब लाज ॥
[1]योषित पुरुष केओ नहि रहल । कृष्ण - वियोग सभक मन हरल ॥
देखब द्वारका कृष्णक धाम । जिवितहिँ पुरत स्वर्ग-सुख काम ॥
पशु प्राणी जत सभ चलि भेल । कृष्ण दयामय सङ कए लेल ॥
देखि वरिआत सरो भेल छुबुध । सबहिक लोचन शोभा लुबुध ॥
अतए समीहा[2] कृष्णक चित्त । तहिखन से सभ होइछ वस्त ।
कृष्णागमन गरुड़ लए चारि । एखन अलेख देखिअ अवधारि ॥
कृष्णक रचन सकल संसार ॥ रत्नपाणि भन न करु विचार । कृष्णक रचन सकल संसार ॥

१—नारी । २—इच्छा ।

इति गंगोली सं०—जीवेश्वरात्मज श्रीरत्नपाणिशर्म्म प्रणीतायामुषाहरणनाटिकायां श्रीकृष्ण द्विद्वारकायात्रापर्य्यन्तं तृतीयं प्रकरणम् ॥

(४)

कृष्णगमनावधि द्वारकायां सर्व्वे जनाः कीदृशा अभवन्नित्याह [1]तटस्थो भाषागीतेन :—

रतिसुत हरण बेआकुल सभ जन, रोसर कृष्ण वियोग ।
निशदिन नीन भवन नहि भावए, सभ तेजल जत भोग ॥
देवकि आदि विकल मन सन्तत, जल बिनु मीनक प्राण ।
कोन दिन आंखि देखब यदुनन्दन, तन्हि बिनु के कर त्राण ॥
शोणितपूर दूर बहु योजन, बलिसुत ततए नरेश ।
रतिसुत हेतु करब गए सङ्गर, के जन कहत उदेश ॥
कृष्ण-पराजय कतहु न सूनल, मानस नहि रह थीर ।
लाख समारिअ रहए न धैरज, सरवित[2] लोचन नीर ॥
गणक बजाए सगुन जन बूझिअ, आओब कखन मुरारि ।
दिन बिनु भानु द्वारका हरि बिनु, देखिअ सबहु विचारि ॥
रत्नपाणि भन सुनिअ सगुन जन, न करिअ मानस खेद ।
पहुँचब आज कृष्ण सभ मिलिकहु, से जानब मन वेद ॥२१॥

अतः परं दुर्गां स्तौति यादवा सहायत्वात् सुरगिरा गीतेन । गीतं यथा :—

जय जयेशविलासकारिणि प्रणतजनभयभारहारिणि,
सजटपटुवटुरूपधारिणि पतिततारिणि हे ।
तरुवद्दृष्टिविचारसारा निजसमीहितकामचारा,
कृतशमीकृतधरणिभारा जगदपारा हे ॥

१—उदासीन, सामान्य पात्र । २—स्रवित, चूवत ।

विस्तरीकृतशैलवंशा शमिततज्जितराजहंसा,
वेदवृन्दकृतप्रशंसा शमितकंसा हे ।
निर्गुणासि गुणौघशालिनि समरजितरिपुमुण्डमालिनि
सकलसुरमुनिमनुजपालिनि मोहजालिनि हे ॥
विन्ध्यपर्व्वतकृतनिवासा पूरिताखिलयादवाशा,
कामरूपकृतैकवासा सर्व्वदासा हे ।
त्वमसि मातः सिद्धिदात्री भक्तकामदपरमपात्री,
वैरिमारणकालरात्री भवविधात्री हे ॥
त्वमसि भवसकलाभिरामा त्वत्कृपाखिलसिद्धकामा,
देहि वरमिह गिरिशवामा प्रकृतिरामा हे ।
किञ्चिदन्यविहेतिनेहे (?) सदा वस मिथिलेशगेहे,
जननि निवृतिशुभविदेहे दिव्यदेहे हे ॥५२॥

अथ दुर्गास्तुत्यनन्तरं कञ्चित्कालमतीत्य द्वारकानगरप्रान्ते सर्व्वसेना समागत्य स्थिता। इतः श्रीकृष्णो नारदं मुनिमाह :—"हे मुने ! किमतः परं विधेयम्"। मुनिराह:—"हे कृष्ण सर्व्वरत्र स्थेयम् । द्वारकायां सर्व्वे व्याकुलाः सन्ति त्वद्वियोगादतः शोणितपुरोद्भव वृत्तं सूक्ष्मरीत्या निगाद्य चारः कश्चिद्विचारदक्षः प्रेषणीयः। ततो भवद्वार्त्तां निशम्यानन्दकन्दायितकलेवराः सेनासागरा नागरा यादवास्सर्व्वे समागमिष्यन्ति । यथयोग्यं सम्मिलनं विधाय नगरप्रवेश उचित इति मामको विचारः"। कृष्ण आह "मुने भवदुक्तं युक्तमेव प्रतिभाति"। अथ द्वारकायां यादवास्सकला विकलाः कृष्णसन्दर्शनविरहाधिकखिन्ना गोप्योऽप्युत्कण्ठिताः । धेनवादयस्तु प्राणानुत्स्रष्टुकामा एव । एतस्मिन्नेव समये श्रीकृष्णप्रेषितश्चार आजगाम । तं दृष्ट्वा सर्व्वे जगदुः"कस्त्वमत्रागतोसि"। स आह "द्वारकानगरसन्निधौ सपरिवारः कुशली तिष्ठति श्रीकृष्णस्तत्प्रेरितोऽहमत्रागतोस्मि" । इति वार्तां निशम्य हर्षातिशयवदनाः सर्व्वे यादवा अभवन् । पुनस्तेऽपृच्छन्—"भोदूत ! बाणासुरपुरे किंवृत्तमभवदिति वद" । स आह—अत्र दोहा :—

[1]बाणासुर पुर जाए कहु, कृष्ण कएल बड़ युद्ध ।
गेल द्विभुज भए राज दए, शिवतट मानस-शुद्ध ॥६६॥
लखि खगपति सभ उरगगण, कतए किदहु भाए गेल ।
हरषित रतिसुत आनि कहु, कृष्ण अङ्क कए लेल ॥६७॥
नारद मुनिक विचारतहु, रतिसुत कएल विवाह ।
विधि विधिवोधित भेल सभ, ऊषा पओलन्हि नाह ॥६८॥
उचित धर्म्म हरि बूझि मन, राजा कएल विमान[2] ।
पुरवासी सभ कृष्ण-मय, कि कहब सबहक ज्ञान ॥६९॥
अङ्क चतुर्थी कर्म वश, बीति गेल दिन चारि ।
देखिअ सभ मिलि जाए कहु, हरषित जेहन मुरारि ॥७०॥

अथ गीतं भाषया :—

[3]कर्णाकर्णि सुनल सभ लोक । भेल कृतारथ बिसरल शोक ॥
तखन तैआरी नगरक भेल । दोसर द्वारका जनि बनि गेल ॥
चन्दन-चर्च्चित जगमग शरणि[4] । कुसुम-विभूषित भए गेल धरणि ॥
तनए पताका सभ दिश शोभ । देखइत सुरपतिकाँ होअ लोभ ॥
कि कहब नगरक तखनुक चरित । विशकर्म्मा जनि सिरजल त्वरित ॥
सभ दिशि बाज सकल जन तखन । कृष्ण-कमल-मुख देखब कखन ॥
गज-रथ-वाजि पदाति अलेख । हरष बेआपित चलल अशेष ॥
कति विधि यान तैआरी भेल । देवकि आदि अपन कए लेल ॥
चलति कुमारी सभ नहि लाज । कृष्णक शगुन करब गए आज ॥
पूर्ण कलश पल्लव मुख काज । लए तिअ चललि लेजि गुरुलाज ॥
सन्ध्या समय चलल सभ साजि । जगमग चौदिश मणि-गण-राजि ॥
तखन विविध तनु बजाव बाज । बन्दी सुयश गाब शुभ साज ॥
चललि सकल [5]जनि लय मुद बोभ । जाए पड़ल सभ कृष्णक सोझ ॥

१—नगरद्वार पर सँ कृष्णक पठाओल दूतक उक्ति द्वारकानगरवासीक प्रति ।
२—धीमान्, बालक परामर्शदाता सचिव । ३—कानाकानी । ४—मार्ग ।
५—जनि ? स्त्री ।

उचित विहित हरि सभसँ मिलल । बाणासुरक चरित सभ कहल ।।
देवकि प्रभृति उषा लग गेलि । देखि तसु रूप कृतारथ भेलि ।।
उषा कएल भूमिलित प्रणाम । आशिष भेटल पुरओ मनकाम ।।
बाणासुरक देखल तिअ लोक । ककरहु नहि रहलो पति-शोक ।।
कृष्णक चरण कएल धनि शरण । देखि द्वारका भए गेल तरण ।।
कुशलादिक सभका भए गेल । तखन मुरारि हुकुम एह देल ।।
श्रीवसुदेव चलिअ निज गेह । देखब कतन बहुत हिअ नेह ।।

तदनन्तरं छन्दोन्तरं भाषागीतमाह तटस्थः[१]—

तखन नारद कएल सम्मत, भेल लोक तैंआर ।
आगु भए मुनि चलथु सबहिक, अधिक कृष्ण पिआर ।।
ताहि ॰त्तर शगुन जत छल, आगु से सभ भेल ।
तखन दुइ दल चलल हरषित, शेष-शिर[२] दबि गेल ।।
धरणि डगमग सिन्धु उछलित, भेल चौदिश शोर ।
वृष्णिवंश-समुद्र-चन्दिर[३], कृष्ण आगम जो॰ ।।
तखन सभ दल नगर पहुँचल, सौध-शोभा देखि ।
बाणपुर जन सबहु मानल स्वर्गधाम विशेषि ।।
तखन सभ गेल कृष्ण-मन्दिर, जतए जगतक वास ।
एक[४] सौध निवास पओलक, भेल पूरित आस ।।
चन्द्र मन्दिर अति अनन्दित, सपति ऊषा जाए ।
ततए देखल देवि दुर्गा, यादवैकसहाय ।।
तखन देवकि आदि कहलन्हि, करिअ देवि प्रणाम ।
रत्नपाणि सम्हारि ऊषा, भेलि अवनति काम ।।७२।।

अथानिरुद्ध सहिता बाणात्मजा यादवकुलदेवताकां-श्रीदुर्गा-प्रणामं करोतिस्म ।

दुर्गा दुर्गतिनाशिनी वसुभुजा या यादवोल्लासिनी
पञ्चास्यैकविलासिनी शुभजटाजूटौघसोल्लासिनी ।

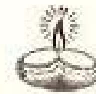
१—उदासीन, सामान्य नट । २—शेषनागक फणा ।
३—वृष्णिवंशरूपी समुद्रक चन्द्र । ४—महल ।

मायामोहनपाशिनी सुरनुता सन्नाशिनी वैरिणाम्
तां त्वां देवि नमामि नाम शिरसा पत्या सहत्यादरात् ।।७३।।

अथात्र गीतं नृगिरा :—

तखन चुमाओन भेल सभवीधि । कि कहब हरष मिलल नवनीधि ।।
दुलहि दुलह त्रिभुवन अभिराम । नगहड़ आए कएल विश्राम ।।
गीत नाद बीतल दिन चारि । भेलि कृतारथ जत छल नारि ।।
भड़फोड़ी समुचित भए गेल । ओरभोर विधि गुरु-मत भेल ।।
ऊषा-चरित सकल जन देखि । के नहि आशिष देथि विशेखि ।।
सन्तति सम्प्रति सभथुह पूर । श्रीयुतकृष्ण जगत भरि शूर ।।
सकल मनोरथ पुरि गेल जखन । कृष्णक मानस भाए गेल तखन ।।
करिअ सभा सभ आओब देव । ऋषिगण जनिक चरण सभ सेव ।।
तखन तैंआरी सभा भाए गेल । धरणि सुधर्म्मा जनि बनि गेल ।।
रत्नपाणि भान अनुपम चरित । चाहथि कृष्ण होअ से त्वरित ।।७४।।

इति शुभम् ।।



परिशिष्टम्

रत्नपाणिकृतम्

दशमहाविद्या-गीतम्[1]

१--श्रीकालिकायाः (इमन-कल्याण-रागे)

जय जयाचलराजकन्ये, चरणचिन्तक जन शरण्ये,
निगम-नुतिमतिजननि धन्ये सदयगण्ये हे ॥
सघनघन रुचि-चिकुरजाले, समय-सन्तत-रणकराले,
शिशुकलाकर वलित भाले, रूपशाले हे ॥
दहन रवि विधु नयन शालिनि, सकल सुरमुनि मनुजपालिनि,
कर्ण शव युग भूतजालिनि, मुण्डमालिनि हे ॥
रुधिर - पूरित विकट दशने, वैरिमर्द्दिनि गगनवसने,
स्रवन - निःसृत लम्बिरसने, भीम हसने हे ॥
भव पराभव भार हारिणि, नील तनु रुचि पुण्य चारिणि,
चण्डमुण्ड विनाश कारिणि, पतित तारिणि हे ।
असि शिरोभय वर विमिश्रे, विजित नव रुचिशुचि सहस्रे,
दलित-सुररिपुमदतमिस्रे, प्रणवमिश्रे हे ॥
कटि विराजित शव कराली हर हृदिस्थित गतिमराली,
योगिनीगण वलितताली दक्षकाली हे ॥
वेदभुज शिव सुरतलीने, क्षाम तनु कुचयुगल पीने,
शिवमयीकृत विविध दीने, जगदधीने हे ॥

१—दश गोट गीत संस्कृत मे ओ शेष मैथिली मे अछि। एकर प्रकाशन १९१२ ई० मे बाबू ललितेश्वर सिंहक द्वारा सम्पादित 'मैथिलभक्ति प्रकाश' नामक गीत संग्रह मे रमेश्वर प्रेस, दरभंगासँ भेल छल। (पृ० १ सँ १२ एवं १६)।

चितचयावनि विहितवासा, सरस-केरव कृत विलासा,
निजहासकलीकृताशा, पूरिताशा हे ॥
पाहि शिवशिव दुरित शोषिणि, रुद्रसिंह नृपैकपोषिणि,
रत्नपाणि समाप्तुतोषिणि, घोरघोषिणि हे ॥

२--श्रीतारायाः (इमनकल्याणरागे)

जय जगत्त्रय गति विचित्रे, सघन घन रुचिनत चित्रे,
सदयमानस भव विधात्रे जीविचित्रे हे ॥
त्वमसि तारिणि परमखर्व्वा, रणशमीकृत शत्रु गर्व्वा,
लम्ब कुक्षि समक्ष सर्व्वा, श्रुति निगर्व्वा हे ॥
द्वीपिचर्म मनोज्ञ चीरा, वेदबाहु समस्तधीरा,
मुण्डमालिनि कलशभीरा, जनित नीरा हे ॥
पञ्चमुद्रा ललित भाला, पिङ्गलोग्र जटा विशाला,
बालरविहृत द्युति कराला, शम्भु बाला हे ॥
सर्व्वविक् चिति मध्यवासा, पद समुन्नत पद विलासा,
खड्ग कर्त्तृधरा सुहासा, मंजुलासा हे ॥
वामकर सितकञ्जमुण्डा, रण विनाशित चण्डमुण्डा,
सकल गोचर नित्यपण्डा, कोपदण्डा हे ॥
जगद्व्यापि जलौघधारा, श्वेतपंकजपद विहारा,
निखिल सुरमुनि मर्त्यसारा, उग्रतारा हे ॥
रुद्रसिंहनृपानुरञ्जिनि, रत्नपाणि भयौघ भञ्जनि,
विषय रसमणि नैकरञ्जिनि, शत्रु गञ्जनि हे ॥

३--श्रीत्रिपुरसुन्दर्य्याः (इमनकल्याणरागे)

त्रिपुरसुन्दरि चक्रवासा, -कलित बहुविधि भव विलासा,
शतमखादि सुरौघदासा, द्योतिताशा हे ॥
विविध भावक रुचि शरीरा, सतत शोभित रक्तचीरा,
भाल राजित विधु पटीरा, गिरिशधीरा हे ॥

सततपूरित - सकलकामे, वेदभुजपरमाभिरामे,
त्वमसि नित्याकल्पयामे, शम्भुवामे हे ॥
पाशसृणि धनुरिषु हस्ते, सहजराजित निधि समस्ते,
सुकृति निज चरणादि शस्ते, अति प्रशस्ते हे ॥
त्वमसि सा जगदेकमाता, त्वत्कृपाजनितद्विधाता,
हरिहरादि सुकीर्त्तिघाता जननिपाता हे ॥
त्वमसि जगदाधार रूपा, निजकृपावश देव भूपा,
त्रिविध लोचनमैत्युपा, नरसरूपा हे ॥
अयुतबालदिवाकराभा, गीतकीर्तिनिकायलाभा,
सकल जगदभिपद्मनाभा, विधु नखाभा हे ॥
तन्त्र मन्त्र विधानदीक्षा, त्वमसि सुन्दरि सत्परीक्षा,
वेदवृन्दषडङ्गशिक्षा, ब्रह्मदीक्षा हे ॥
रुद्रसिंह नृपैकरक्षिणि, निजवशीकृत सकल यक्षिणि,
रत्नपाणि सुतैक पक्षिणि, शत्रु भक्षिणि हे ॥

४ - श्रीभुवनेश्वर्य्याः

बालदिनमणिरुचिरदेहे, शशिकिरीटशुभप्रदे हे,
गुरुकुचे करुणैकगेहे जयविदेहे हे ॥
स्मेरमुखि भुवनेशि धन्ये स्थापिताखिल-निरयजन्ये,
भक्तजनवरमुक्तिजन्ये शैलकन्ये हे ॥
अभय-सृणिवरपाशधारिणि, वेदबाहुविलासकारिणि,
भक्त जनभयवृन्द हारिणि, दनुजदारिणि हे ॥
कमलपद गति विजित हंसे कौटबीतनु शमित कंसे,
सकलदेव गणावतंसे, विदितवंशे हे ।
हरिहरादिक विबुधसक्ते, शुभमयी कृत विविध भक्ते,
सदय मानस रुद्ररक्ते, भवविरक्ते हे ॥
भवनिकाया भवसि माया, जातु चित्तगिरीश जाया,
विविध विरचित विश्वकाया, तदनुपाया हे ॥

कुरु कृपां मयि देवि दीने, शक्तिकादि विधान हीने,
जननि मयि करुणानदीने, तरुणि लीने हे ॥
त्वमसि महिमाद्भिरपारा, कल्पपादपवद्विहारा,
जयमयी कृत भीति भारा, जगदुदारा हे ॥
रुद्रसिंह नृपैक पालिनि, रत्नपाणि कृताग्रदालिनि,
भक्त मानस वास शालिनि, मञ्जुमालिनि हे ॥

५--श्री भैरव्याः

उदितभानु सहस्रबिम्बा, रक्तपट्टपटी सुदम्बा,
भैरवी जयति प्रलम्बा, तदवलम्बा हे ॥
जपवटीमभयञ्च विद्या-मपि वरं दधतीनवद्या
रक्तलिप्त - पयोधराद्या विरदगद्या हे ॥
वेद कर वरलोकनेत्रे, रक्तपंकजरुचिविचित्रे,
शिरसि हिमरुचि मुकुट चित्रे, दुःकृतत्रे हे ॥
कुन्द सुन्दर धवलदन्ता, मञ्जुहासा जगदनन्ता,
प्रणत भव्यदशील शान्ता, शम्भु कान्ता हे ॥
जटित मणि गण पीठ माले, ज्योतिरोघ महाविशाले,
शत्रु कानन दाव जाले, रणकराले हे ॥
बद्ध कर युग विबुध वनिता पठति नृत्यति हसति ललिता,
यत्पुरो विविधा सुकविता, श्रुतिविदिता हे ॥
प्रणतजन दुरितापहारिणि, नव्य भव्य भवैक कारिणि,
कमल कोमल चरण चारिणि, शिव विहारिणि हे,
रुद्रसिंह धरैकपाले, कुरु कृपां मयि शम्भबाले,
रत्नपाणि सुताग्रदाले, रत्नमाले हे ॥

६--श्रीछिन्नमस्तायाः

नाभिासितकंजभानुरेषा, योनिरतिपतिरतिविशेषा,
शक्त मानसरति विशेषा, सभगवेषा हे ॥

तत्र विलसितनेत्रहस्ते सूर्य्य कोटि रुचि प्रशस्ते,
रणविनाशितरिपुसमस्ते, छिन्नमस्ते हे ॥
हृदि सुशोभितमुण्डहारा यज्ञसूत्र कृताहिसारा,
भूषणाङ्ग नरास्थिभारा विदितसारा हे ॥
मस्तकं परिधारयन्ती, स्वस्य वामकरे लसन्ती,
निजगलासृजमपि पिबन्ती, शत्रु हन्त्री हे ॥
डाकिनी वलिताभिमाना, वर्णिनी च विराजमाना,
वामदक्षिणयोस्समाना, रक्तपाना हे ॥
सम्प्रसारितमञ्जुलास्या, लेलिहाना मञ्जुहास्या,
शंकरादिसुरैर्न्नमस्या, सत्प्रशंस्या हे ॥
विविधपुष्पचयानुषङ्गा, सज्जितालकशोभिताङ्गा,
भूरिरक्ति कृताघभंगा, विविध गङ्गा हे ॥
रुद्रसिंहनृपे सहाया भव सदा गिरि जैकजाया,
रत्नपाणिसुतानुराया, जननि माया हे ॥

७--श्रीधूमावत्याः

जयति भगवति काकयाने, देवि धूमावति निधाने,
जगति रूक्षतनुप्रधाने, लम्बमाने हे ॥
मलिन चीर विशालदन्ता सूर्यकक्षचला दुरन्ता,
दुर्मना कलहैकशान्ता, शूलिकान्ता हे ॥
त्वमसिनगरोद्ध गदाक्षी, कृष्णरूक्षनिभैकपाक्षी,
चितामयभुवि वासधात्री, भयविधात्री हे ॥
रूक्षदृक्भय भीति भावा, विविधरिपुवनवृन्ददावा,
गिरिशदर्शितचारुहावा, दुःखभावा हे ॥
सम्पतशोभितमुक्तकेशा स्वेदपूरितहृत्प्रदेशा,
देवि विहरसि कामवेशा, वशसुरेशा हे ॥
सदा निजवशधनदवित्ता, क्षुधा व्याकुलित स्वचित्ता,
यदपि सुरमुनि मर्त्यसत्ता त्वमसि तत्ता हे ॥

त्वत्प्रभावमयो महेशो नैव हरिरपि चक्र मीशो,
जयति कोऽपि सुरोमरेशो य. प्रजेशो हे ॥
कुरु दयां मयि जननि दीने रत्नपाणि शिशावधीने,
मैथिलेशदयावदीने, विविधलीने हे ॥

८- श्री बगलाया:

अयि सुधोदधिमणिविकासा; लसति वेदीविधुविलासा
तत्र सिंहासनगतासा; मोहपाशा हे ॥
लससि बगले पीतवर्णे पीतभूषण—वलितकर्णे
कामसुन्दरतनुरपर्णे, सर्ववर्णे हे ॥
वैरिणं परिपीडयन्ती मुद्‌गरम्परिधारयन्ती
स्वच्छदक्षकरे लसन्ती मोहयन्ती हे ॥
वामकरधृतवैररिसने सततराजित पीतवसने
धृतगदाघृणिशालदशने, मञ्जुहसने हे ॥
कृतदशाकृतिसिद्धिभेदा त्वमसि देवि सतापभेदा
स्मृतिपुराणसमानवेदा, शमितखेदा हे ॥
मदनमोहनरूपशाले जननि करुणाभवविशाले
[1]केश नव नव पाश जाले, भव्यबाले हे ॥
भवसि मातः सिद्धिविद्या, त्वत्प्रसादजगद्यपद्या,
मूकका अपि हृद्‌यविद्या—स्तदनवद्‌या हे ॥
देहि देहि वरं शरण्ये, रुद्रसिंहनृपेतिधन्ये,
रत्नपाणिहृदेकगण्ये, भूपकन्ये हे ॥

९ -श्रीमातङ्‌ग्या:

श्यामघन तनु सिंह याने, सकल सुर मुनिकीर्तिगाने,
भक्त सम्भव विभवदाने, भयनिधाने हे ॥

1—'हेलि केलि नरणवासुजाले'—इति मूलपाठः ।

अष्टसिद्धि विराजमाने, सुरकृतार्चन सन्निधाने,
भाल शशधर दीप्यमाने, नित्यभाने हे ॥
खेटमङ्‌कुशमपि दधाना, रत्नसिंहासनशयाना,
पाशमसिमपि सन्निधाना गीतगाना हे ॥
रत्नभूषण चारुहासा, लोल लोचन विबुध दासा,
शावकोदित पदविकाशा, सुप्रकाशा हे ॥
नील नीरज नवप्रभासा, लसति वीणावरविलासा,
देवि मातङ्गी समाशा, नुदिन वासा हे ॥
कटक वासित वर्णरक्ता जनसुकच्छदरुचिविभक्ता,
सकलसुरभविकानुरक्ता, भूरि भक्ता हे ॥
दनुजराक्षस—नाशदक्षा, रणकृताखिल-देवरक्षा,
देववर्ण विभक्त पक्षा पीनवक्षा हे ॥
रुद्रसिंहनृपे सहाया भव सदा जगदादिमाया,
जननि सुररिपु सामिकाया मदनपाया हे ॥

१०-श्री लक्ष्म्याः (इमन कल्याण रागे)

जात रूप रुचि प्रधाना, क्षौमचीर विराजमाना,
पद्म युगमभयन्दधाना, जयनिधाना हे ॥
इन्दिरे वरदासि धीरा, प्रणवरूपा सृष्ट नीरा,
स्वीयकरुणव्यास—कीरा सुरगभीरा हे ॥
विश्वचारुनितम्बदेशा, पद्म वासिनि मञ्जुवेशा,
सघन नीरद नीलकेशा नतसुरेशा हे ॥
सितगजैरभिषिच्यमाना जलघटैरमृतैरमाना
स्वर्णजैरतिमोदमाना बहुलदाना हे ॥
सिन्धुजेति समस्तगीता त्वमसि धरणीजापि सीता,
कृतदशाकृतिरुपनीता जगदधीता हे ।
अष्टसिद्धिनिधिप्रदात्री कामनाचयपूर्णकात्री
स्वीयनिर्मितसकलगात्री, भवविधात्री हे ॥

सप्तवारिधि ललित कोपा, सदा निजवश विबुधयोषा
अमितबहुविध भक्त दोषा सततलोपा हे ।।
स्थिरा भव मिथिलेशगेहे किञ्चिदन्यदपीह नेहे,
रत्नपाणिवरप्रदे हे, शंभुगेहे हे ।।

११-श्रीकालीक

जय जगजननि ज्योति तुअ जगभरि, दक्षिण पदयुत नामे ।
अति द्युति पीन पयोधर उन्नत सजल जलद अभिरामे ।।
विकट दशन अति बदन भयानक, कुञ्चल मंजुल केशा ।
शोणितमय रसना अति लह लह, श्रीकर मस्तक देशा ।।
तीन नयन अति भीम राव तुअ, शव दुइ कुंडल काने ।
शव कर काटि सघन पाँती कय, चौदिस कटि परिधाने ।।
मुण्डमाल उर चारि भुजा तुअ, खड्ग मुण्ड दुहु वामे ।
दक्षिण कर वर अभय विराजित, गगन-वसन वसु यामे ।।
शिव-शव रूप दरश तुअ पद युग, सदा वास समशाने ।
फेरव रव कर चौदिश शोभित, योगिनिगण परिधाने ।।
रत्नपाणि भन अपरुब तुअ गति, के लखि सक जगमाता ।
मिथिला पतिक मनोरथ दायिनि सफलित हरिहरधाता ।।

टिप्पणी—श्रीकर = चन्द्र । भीमराव = भयानक शब्द । शव = मृतक । गगन-वसन = दिगम्बरि । वसुयामे = आठो पहर । फेरव रव = सियारक शब्द ।

१२-ताराक

लम्ब उदर अति खर्ब भीम तनु, द्वीपि-अजिन कटि देशा ।
अस्थि चारि पट ता बिच खप्पर, बाल भयानक केशा ।।
एक चरण चढ़ अपर चरण लस, से सित पङ्कज वासी ।
अति मृदु हास भास नव यौवन, लखि रुचि शुचि सम भासी ।।
दक्षिण बाहु दुहु खड्ग कर्त्तृ लस, रिपुशिर उत्पल वामे ।
ऋषि अक्षोभ्य भाल पर शोभित, लह-लह रसन सुकामे ।।

प्रात समय रविबिम्ब त्रिलोचन, दन्तुर दन्त विकासे ।
ज्वलित चिता चौदिश ग्रह-ग्रह कर, तत्र देवि तुअ वासे ।।
पिङ्गल जटा जूट शिर शोभित, वेदबाहु अति भीमा ।
अनुपम चरित चकित सुर नर मुनि, के कहि सक तुअ सीमा ।।
रत्नपाणि भन तुअ पद सेवक, तारिणि सुनु अवशेषे ।
श्रीमिथिलेशक सतत करिअ शुभ, ताहि न करिय विशेषे ।।

टिप्पणी—खर्ब भीम तनु = भुट्टि वा वयोन एवं भयानक देह । द्वीपि अजिन = बघम्बर । अस्थि = नरकंकाल । पट = ऊपर पीठ कए पाड़ल । लस = शोभित, सित = उज्जर । शुचि = प्रचण्ड ग्रीष्म । वेद बाहु = चारि भुजा । भीमा = भयानक ।।

१३-त्रिपुरसुन्दरीक

जय सिसु भानु अयुत तेजोमयि त्रिपुरसुन्दरी देवी ।
तीनि भुवन धन्या तोहि सब कह, अवर पुरन्दर सेवी ।।
कतिविधि अतिरत आरत युति तनु, बाल कलाकर भाले ।
अरुण वसन विलसित तुअ भगवति, देवि त्रिलोचन बाले ।।
सम सरपास धनुष इक्षु-दण्डक सृणि शोभित कर चारी ।
श्रीयुत चक्र विराजित तुअ पद, कमल भक्त भय हारी ।।
आगम निगम विदित तुअ महिमा, के कहि सक अवशेषी ।
तुअ सब जगत भगत शवकारिणि, की सब करत विशेषी ।।
रत्नपाणि तुअ चरण सरोरुह, सभक करिय अभिलाषे ।
मिथिला पतिक सतत कर मङ्गल, कि कहब गोचर लासे ।।

टिप्पणी—सिस भानु = बालसूर्य । अयुत = दस करोड़ । पुरन्दर = इन्द्र । अतिरत = सज्जित, रञ्जित । आरत = आरक्त । कलाकर = चन्द्र । त्रिलोचन बाले = शिवक प्रेयसी । सरपाश = बाण ओ फानी । इक्षु-दण्डक = कुसियारक छड़ । सृणि = अंकुश ।

१४--भुवनेशीक

जय भुवनेशि भीतिभय भञ्जनि, भगवति भवित देहा ।
श्याम जलद अभिराम चिकुर चय, लसत भाल शशि रेहा ॥
उदय समय रवि बिम्ब अरुण छवि, नयन तीनि तुअ भासे ।
सिरमय जड़ित किरीट विराजित, मुख सुषमा मृदु हासे ॥
वाम उपर कर लसय अभयवर नीच बीच कर धन्या ।
दहिन उपर कर अंकुश तसु अध, पास भास गिरि कन्या ॥
भूपुर भवन वृत्तिदल षोड़स, ता बिच वसुदल कञ्जे ।
ता बिच बीच उपर तुअ पद युग, कमल ध्यान भय भञ्जे ॥
तुअ तनु रचन वचन गोचर नहि चकित शम्भु जगदीशा ।
भगत मनोरथवश तुअ तनु जनु वचन देशायित ईशा ॥
रत्नपाणि भन सुनिय सुमन भय, करुणा करु जगमाता ।
पुरिय मनोरथ श्री मिथिलेशक, तुअ यश भास निरमाता ॥

टिप्पणी—वाम उपर = वामा भागक उपरका हाथमे अभय ओ निचला हाथमे वरदान । तसु अध = दहिना भागक निचला हाथ मे । वसुदल—अष्टदल ।

१५ भैरवीक

अयुत उदित रवि रुचिर देह छवि, अरुण पाट पट भासे ।
रिपु शिर निकर माल उर शोभित, दश दिश ज्योति विकासे ॥
रुधिर लेपमय पीन पयोधर, मुख अरविन्द समाने ।
शशधर रत्नमकुट शिर शोभित, मृदुल हास परधाने ॥
पुस्तक, अभय, अक्ष जपमाला, वर कर चारि निधाने ।
निजजन शंकरि, असुर भयंकरि, श्रीभैरवि तुअ ध्याने ॥
विषय विषम रस हृदय देविपद, भजत न धरत ने ज्ञाने ।
भावन भावन तसु उदित सुकृति बस, से जन भव पर ध्याने ॥

जगत जननि विनती कछु सुनिए, रत्नपाणि भन दासे ।
श्री मिथिलेशक हृदय वास करु, पुरिय तासु सभ आसे ॥

टिप्पणी—अयुत = दस हजार । निकर = समूह । शशधर = चन्द्र । निजजन = अपन सेवकक लेल शङ्करी छवि ।

१६—छिन्नमस्ताक

जय जग ज्योति जगत गतिदाइनि, चिकुर चारु रुचि भाले ।
परम असम्भव सम्भव तअ वस, पीनपयोधर बाले ॥
कमल कोष रविमण्डल ता बिच त्रिविध त्रिकोणक रेखा ।
ता बिच रति विपरीत मनोभव, सुषमा सरित विशेषा ॥
पद आरोपित पद लस ता पर, अरुण भानु शशि रेहा ।
उरस विशाल माल रिपु-मुण्डक, फणि उपवीत सुरेहा ॥
दक्षिण कर करवाल, वामकर, निज शिर अति बिकराले ।
लह लह रसन दशन कटकट कर, फूजल केश विशाले ॥
निज गल गलित उपर कय रुधिरक, धार तीन बह धीरे ।
दुइ दुइ योगिनि पिबथ दुऊ दिश, निज मुख एक सुधीरे ॥
रत्नपाणि निज सेवक जानिए, मानिए देवि निहोरा ।
मिथिलापतिक सतत करु मंगल, मन धरु गोचर मोरा ॥

टिप्पणी—मनोभव = कामदेव । पद आरोपित = ताहि त्रिकोण पर चरण शोभैछ । माल रिपुमुण्डक = विशाल छाती पर शत्रु मुण्डक माला । फणि = सापक जनेऊ । करवाल = तरुआरि । निजगल = अपन गरदनि सँ बहराइत ॥

१७--धूमावतीक

जय धूमावति जगत विदित गति, श्याम रुच्छ तनु भासे ।
फूजल चिकुर निकर अति लम्बित, तनु जनु छवि अकासे ॥
कलह-प्रेम अनुखन तोहि भगवति, अम्बर मलिन सरीरे ॥
दशन विकट अति विशद विरल गति, स्वेद वहय तनु धीरे ॥
क्षुधित सतत मन रुच्छ त्रिलोचन, कुक्षि सूप सम तोही ।
तरल सुभाव दुसह मन अनुखन जन उद्वेगन मोही ॥

वायस रथ तुअ देखि त्रिलोचन, वास बचय समसाने ।
कउखन सुन्दरि अनुपम रुचि धरि कउखन परम भयाने ॥
रत्नपाणि भन रहिय मुदित मन, निज सेवक मोहि जानी ।
सदा करिय मिथिलेशक मंगल, गोचर सुनिय भवानी ॥

टिप्पणी—चिकुर निकर=केशसमूह । स्वेद=घाम । वायस रथ=रथक ऊपर मे कौआ ।

१८--बगलामुखीक

जय बगलामुखि अमृत-सिन्धु बिच मणिमण्डप निविदेशी ।
ता बिच रत्नसिंहासन ऊपर, तुअ पद लस भयभेदी ॥
पीतवसन तुअ पीत विभूषण पीत कुसुममय माला ।
कज्जल चिकुर निकर दुइ लोचन दुखमोचनि हरबाला ॥
वाम हाथ रिपुरसन रक्तमय, दहिन गदा अभिरामा ।
अनुगत जन जयकारिनि सुररिपु, मर्दिनि पूरत कामा ॥
कुण्डल-लसित गण्डमण्डल युग, चण्डभानु युग जोती ।
विपति विदारिनि रिपुमद हारिनि, दन्त विराजित मोती ॥
श्री मिथिलेशक करु जय देवी, पूरित करु सभ आसे ।
रत्नपाणि गोचर करु भगवति, करु मम हृदय निवासे ॥

टिप्पणी—रिपुरसन=शत्रुक जीह । चण्डभानुयुग=दू गोट प्रचण्ड सूर्यक समान ज्योति वाली ।

१९--मातंगीक

कीरक सम रुचि श्याम सुतनु लस, माणिक भूषित देहा ।
शिशु शशि भाल, माल मुक्तामणि, हासमुखी शुभगेहा ॥
निज पद विनत विभव वरदाइनि, तीनि नयन तुअ भासे ।
सुर मुनि आदि सकल जनसेवित चरण विजित पदवासे ॥
कटुक सुवास पान आरत मुख, कर वर राजय बीना ।
अष्ट सिद्धि मयि सिद्धि स्वरूपा, मातंगी जसु नामे ॥

मिथिलापतिक पुरिय अभिलाषा, निज पदनत अवलम्बे ।
रत्नपाणि तुअ पदयुग सेवक, गोचर करु जगदम्बे ॥

टिप्पणी—कीर=सुग्गा । कटुक सुवास=लवंगक सुगन्धियुक्त पान खएला सँ लाल मुँह कएने ।

२०--महालक्ष्मीक

जय कमला कमलायत लोचनि, भव भयमोचनि कन्या ।
घन रुचि कुच, चामीकर तनुरुचि, चारि भुजा अति धन्या ॥
चारु किरीट विराजित मस्तक, धारिनि पाटक चीरे ।
लसय वराभय कर दुई दुइ, पद्म युगल तसु धीरे ॥
चारि कनक घट भरल सुधा रस, अमरित गजकर लाए ।
वाम दहिन भय सिञ्चित कर मुख, कमल मनोहर जाए ॥
मणिगण जटित लसित भूषण तनु, करुणा करु जगमाता ।
शंकर किंकर इन्द्र आदि सुर, सेवक जनिक विधाता ॥
पंकज आसन परम विकासन, ताहि उपर लस देवी ।
रत्नपाणि तसु ध्यान मगन मन, श्री मिथिलेशक सेवी ॥

टिप्पणी—कमलायत=कमलक पत्तीसनक समान आँखि वाली । घनरुचि=स्तन मेघक समान । चामीकर=सोनाक समान देह । चारु=सुन्दर । लसय=शोभय । वराभय=दुइ हाथ मे वर ओ अभय तथा दुइ हाथ मे दुइ कमल । गज कर=हाथी सूँढ मे अमृत भरि वामा ओ दहिना भाग सँ देवीक मुँह मे ढारैत अछि । शंकर किंकर=शिव इन्द्र आदि देवता सेवक छथि ।

२१ – महासरस्वतीक (राग विहाग)

दनुज दलनि दुर्ग भयहारिणि, जय पूरित मन कामे ।
शुम्भ निशुम्भ निसूदनि भगवति, महासरस्वति नामे ॥
घनरुचि केश भेष अति शोभित, आनन आनन्द कन्दा ।
तीनि नयन छबि अतिहि विराजित, भाल बालतनु चन्दा ॥

शूल, शंख रथ-अंग, बाण तुअ, दहिन भाग करधारी ।
घण्टा, हल, पुनु मुसल, सरासन, वाम भाग कर धारी ॥
अनुगत शंकरि, असुर भयंकरि, सारद ससि सम देहा ।
वाहन सिंह लसय तुअ अनुपम, निज जन परम सिनेहा ॥
रत्नपाणि करपुट कय नाचथि, सुनिय देवि मन लाई ।
मिथिला पुरके पुरिय मनोरथ, निसदिन रहिय सहाई ॥

टिप्पणी—महासरस्वती = शुम्भमर्दिनी दुर्गा । बालतनु = छोट देहवाला ।
अनुगत = शरणागतक लेल शंकरी ॥

२२--श्रृंगारक गीत (राग-मल्लार)

सकल श्रृंगार सुभग शुभ वेशा, नृपगृहि देवि कएल परवेशा ॥
दिन दिन मंगल कारिणि धन्या, सिंह चढ़लि राजए गिरिकन्या ॥
शारद - चन्दसुरुचि चय देहा, कृपा विलोकनि भक्त सिनेहा ॥
क्षमा करिअ निज जन अपराधे, त्रिभुवन तारिणि शील अगाधे ॥
रत्नपाणि कर गोचर आजे, सतत परिय मिथिलेशक काजे ॥

२३--आरतीक गीत (राग-हमीर)

शुभ आरति जगदम्ब तिहारी, देखि सपूह गिरिराजकुमारी ॥
दीपक दीप पंचमुख धारी, ता मँह घृत कर्पूर सम्हारी ॥
नीराजन मन करत विचारी, प्रात समय अतिसय सुखकारी ॥
शिव विरञ्चि सनकादि मुरारी, कर आरति तुअ जगत विचारी ॥
रत्नपाणि फल चाहत चारी, देहु जननि फल अति शुभकारी ॥

